दयानंद कला महाविद्यालय, लातूर

हिंदी विभाग

बी. ए. द्वितीय वर्ष

सत्र : तृतीय (मायनर)

पेपर का नाम : "हिंदी साहित्य और पर्यावरणीय चेतना" : HHINM -1201

डॉ. मीना घुमे

Swami Ramanand Teerth Marathwada University, Nanded
Faculty of Humanities- Hindi
Under Graduate Second Year Programme, Semester III
HHINM-1201-4Cr-हिंदी साहित्य और पर्यावरणीय चेतना *(Minor)* Curriculum Details

Module No.	Unit No.	Name of Topic	Hrs. Required tocover the contents 1 Hrs.=60 M.
1.0		पर्यावरण	15
	1.1	पर्यावरण - परिभाषा और महत्व	
	1.2	पर्यावरण और प्रदूषण	
	1.3	पर्यावरण और साहित्य	
	1.4	लेख-हमारे जीवन में वनों का महत्व- कन्हैयालाल मुंशी	
2.0		कहानियाँ	15
	2.1	2.1.1 इक्कीसवीं सदी का पेड़- मृदुला गर्ग 2.1.2 विनाशदूत - मृदुला गर्ग	
	2.2	जंगलजातकम् - काशीनाथ सिंह	
	2.3	कहीं दूर जब दिन ढल जाये - बटरोही	
	2.4	2.4.1 जंगल पर विकास -हरिराम मीणा 2.4.2 नदी गायब है -एस. आर.हरनोट	
3.0		कविताएँ- भाग-1	15
	3.1	3.1.1 धरती - नागार्जुन , 3.1.2 बादल क्या है - राजेश जोशी	
	3.2	पानी की प्रार्थना - केदारनाथ सिंह	
	3.3	उस दिन का जंगल- नीलाधर जगुड़ी	
	3.4	3.4.1 गंगा को प्यार- अरुण कमल 3.4.2 इक्कीसवीं शताब्दी की ओर - अरुण कमल	
4.0		कविताएँ भाग-2	15
	4.1	4.1.1 भारत की चतुर्दिक - साईंगीरा जोशी, 4.1.2 बेटी-पेमरंजन अनिमेष	
	4.2	4.2.1 एक वृक्ष की हत्या - कुँवरनारायण, 4.2.2 गंगास्नान - शार्दूलपति	
	4.3	नदी, पहाड़ और बाजार - असिता केरकेट्टा	
	4.4	पुरोऽहंपृथिव्या- डॉ.हूबनाथ पाण्डेय	
		Total	60

1.0 खण्ड क - पर्यावरण

पर्यावरण : परिभाषा और महत्त्व

पर्यावरण हमारे जीवन का मूल आधार है। पर्यावरण का उपयोग सृष्टि के आदिकाल से ही होता आ रहा है। मानव ने अपने जीवन के विकास में जो भी उपलब्धि अर्जित की उसमें पर्यावरण की अति महत्त्वपूर्ण भूमिका है। मानव की सभ्यता एवं

Edit with WPS Office

संस्कृति का विकास पर्यावरण के अनुकूलन एवं सामंजस्य का ही निष्कर्ष है।

ऋग्वेद सभी वेदों में प्राचीन है जिसमें पर्यावरण शिक्षा को इस प्रकार से परिभाषित किया गया है-

"पृथ्वी माता की धूल तथा पितृतुल्य आकाश का प्रकाश मंगलमय हो, सूर्य अपने पूर्ण तेज के साथ अपने अंश से जुड़ा रहे। अस्तु प्रत्येक प्राणी प्रभु की विराट् सत्ता के समक्ष अपने को उन्मुक्त कर दे तो वह सत्ता उसमें समाहित हो जायेगी। सम्पूर्ण विश्व एवं अखिल ब्रह्माण्ड प्रभुमय होगा। आनन्द और शान्ति का अभ्युदय होगा।"

पर्यावरण एक बृहद् शब्द है। यह उन समस्त शक्तियों, परिस्थितियों एवं वस्तुओं का योग है जो मानव को परावृत्त तथा उसके क्रियाकलापों को अनुशासित करता है और सम्पूर्ण विश्व इससे घिरा हुआ है।

पर्यावरण अंग्रेजी के Environment शब्द का हिन्दी अनुवाद है। 'Enviroment' शब्द का विश्लेषण करने से स्पष्ट होता है कि इसमें Environ का अर्थ 'घेरना' तथा Ment का अर्थ है 'चतुर्दिश अर्थात् चारों ओर से'। इस प्रकार कहा जा सकता है कि पर्यावरण का अर्थ है : "चारों ओर से घेरना।"

पर्यावरण की परिभाषा :

जे. एस. रॉस के अनुसार- "पर्यावरण एक ब्राह्मशक्ति है जो हमें प्रभावित करती है।" "Environment isAn external power, which influences us."

आर. एम. मैकाइवर के अनुसार- "पृथ्वी का धरातल और उसकी सारी प्रकृत दशाएँ, प्राकृतिक संसाधन, भूमि, जल, पर्वत, मैदान, खनिज पदार्थ, पौधे, पशु तथा सम्पूर्ण प्राकृतिक शक्तियाँ जो पृथ्वी पर विद्यमान होकर मानव जीवन को प्रभावित करती हैं।"

विश्वकोश के अनुसार-"पर्यावरण के अन्तर्गत उन सभी दशाओं, संगठनों एवं प्रभावों को सम्मिलित किया जा सकता है, जो किसी जीवन अथवा प्रजाति के उद्भव, विकास एवं मृत्यु को प्रभावित करते हैं।"

एनसाइक्लोपीडिया ऑफ़ ब्रिटेनिका के अनुसार- "पर्यावरण उन समस्त ब्राह्म प्रभावों का समूह है जो जीवों को भौतिक एवं जैविक शक्ति से प्रभावित करते रहते हैं तथा प्रत्येक जीव को आवृत किये रहते हैं।"

सी. सी. पार्क के अनुसार - "पर्यावरण का अर्थ उन दशाओं के योग से होता है जो मनुष्य को निश्चित समय तथा निश्चित स्थान पर आवृत करती हैं।"

"Environment refers to the sum total of conditions which surrounded manAtA given point in spaceAnd time."

ए. गाउदी (1984) ने अपनी पुस्तक 'The Nature of the Enviroment' में पृथ्वी के भौतिक घटकों को ही पर्यावरण का प्रतिनिधि माना है तथा उनके अनुसार पर्यावरण को प्रभावित करने में मनुष्य एक महत्त्वपूर्ण कारक है।

हर्स कोविट्ज के शब्दों में- "उन समस्त बाहरी दशाओं और प्रभावों का योग, जिसमें जीव रहते हैं, वातावरण या पर्यावरण कहलाता है।"

तकनीकी शब्दकोश भारत सरकार के अनुसार - "पर्यावरण उन सभी बाह्य दशाओं एवं प्रभावों का योग है जो भू-पृष्ठ पर जैविक तत्त्वों के विकास-चक्र को प्रभावित करते हैं।"

जर्मन भूगोलवेत्ता ए. फिटिंग के शब्दों में- "जीव की परिस्थिति के समस्त तत्त्व या घटक मिलकर पर्यावरण कहलाते हैं।"

Edit with WPS Office

पर्यावरणविद् ओडम के अनुसार - "पर्यावरण शिक्षा मानव के चारों ओर व्याप्त जीवित तथा भौतिक वातावरण की शिक्षा है।"

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर कहा जा सकता है पर्यावरण किसी एक तत्त्व का नाम नहीं, बल्कि अनेक तत्त्वों का स्वीकृत नाम है जो सम्पूर्ण जीव-जान को नियन्त्रित करते हैं जो एक-दूसरे से अन्तर-सम्बन्धित हैं और जिनका प्रभाव एकाकी न होकर सामूहिक रूप में होता है।

पर्यावरण का महत्त्व :

सन् 1980 में भारत सरकार ने पर्यावरण विभाग की स्थापना की, जो पर्यावरण नियोजन, प्रोत्साहन और सम्बन्ध के लिए केन्द्र सरकार के आधुनिक ढाँचे का केन्द्र बिन्दु है-

सन् 1985 में एक नया एकीकृत विभाग पर्यावरण नीति, कानून, प्रगति का मूल्यांकन, अनुसंधान को प्रोत्साहन, प्रदूषण नियन्त्रण, वन तथा वन्य जीव प्रबन्धन और अन्तरराष्ट्रीय सहयोग के विभिन्न पर्यावरण के महत्त्व के विषयों का संचालन करता है।

पर्यावरण का आध्यात्मिक महत्त्व

जब से सृष्टि की उत्पत्ति हुई तब से प्रकृति की पूजा का महत्त्व है, जैसे आकाश, पृथ्वी, सूर्य, चन्द्रमा, तुलसी, आँवला, नीम, पीपल, बरगद इत्यादि। 6000 वर्ष पहले जब सबसे प्राचीन वेद ऋग्वेद की उत्पत्ति हुई थी उस समय भी पूजा की विधियों में 'प्रार्थना' या 'नमस्कार' की विधि व्याप्त थी।

वाराह पुराण के अनुसार

एक व्यक्ति जो एक पीपल, एक नीम, एक बरगद, दस फूलवाले पौधे अथवा लताएँ, दो नारंगी और पाँच आम के वृक्ष लगाता है उसे नरक से मुक्ति मिल जाती है।

कुरान के अनुसार- अल्लाह ने जो जो कुछ भी हमारे लिए बनाया है इसके अपव्यय की सख्त मनाही है और इस्लाम में यह निषेध भी है।

जैन धर्म के अनुसार- हरे वृक्षों में पल्लवित पुष्पों को तोड़ना निषिद्ध माना गया है।

पर्यावरण का सामाजिक महत्त्व

पर्यावरण का प्रभाव मानव-जीवन के सभी पहलुओं पर पड़ता है, जैसे- सांस्कृतिक, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, मनोवैज्ञानिक इत्यादि तथा मानव-जीवन की प्रकृति, विकास, जीवों के व्यवहार एवं परिपक्वता आदि को भी प्रभावित करता है इसलिए इसका महत्त्व अधिक बढ़ जाता है ताकि मानव पर्यावरणीय शक्तियों का समुचित रूप से प्रयोग करके अपने सामाजिक जीवन को सन्तुलित बनाये रखने में समर्थ हो सके।

पर्यावरण का आधुनिक महत्त्व

वर्तमान समय में पर्यावरणीय तत्त्वों के मानव द्वारा अत्यधिक तथा अनियन्त्रित दोहन ने पर्यावरणीय समस्याएँ उत्पन्न कर दी हैं। जिससे हरियाली नष्ट होती जा रही है। अतः पर्यावरणीय शिक्षा का महत्त्व अधिक बढ़ गया है ताकि मानव पर्यावरण की रक्षा करके अपनी सुरक्षा कर सके और भयंकर बीमारी एवं प्राकृतिक आपदाओं से बच सके। क्योंकि किसी भी देश या क्षेत्र के विकास में उसके पर्यावरण का अत्यधिक महत्त्व है। अच्छा पर्यावरण ही मानव-जीवन को सुखी एवं समृद्धिशाली बनाता है।

पर्यावरण का कृषि में महत्त्व

राष्ट्रीय बंजर भूमि विकास बोर्ड के माध्यम से भूमि के विकास के लिए अनेक कार्यक्रम आयोजित किये जा रहे हैं। कृषि एवं

Edit with WPS Office

सामाजिक वानिकी कार्यक्रमों पर विशेष समय खर्च करना, वनस्पति तथा प्राणी विज्ञान सम्बन्धी सर्वेक्षण करना, मानव टाइगर रिजर्व, असम तथा काजीरंगा राष्ट्रीय पार्क, असम, केवलादेव राष्ट्रीय उद्यान, भारत को विश्व-स्थलों के रूप में स्थापित करना आदि बातों से हम पर्यावरण के अर्थ को समझ सकते हैं। प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष तरीके से हमारे जीवन में पर्यावरण सबसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण है।

विकास में सहायक :

पर्यावरण अध्ययन का महत्त्व विकास से ज्यादा महत्त्वपूर्ण है क्योंकि पर्यावरण के द्वारा आधुनिक उद्योगों को अनेक प्रकार की कच्ची सामग्री, ईंधन इत्यादि प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त आधार-श्रृंखला तथा ऊर्जा-श्रृंखला से उपयुक्त स्तर पर खाद्य पदार्थ तथा ऊर्जा-प्रवाह प्राप्त होते हैं जो मानव जीवन के विकास के लिए अत्यावश्यक हैं।

जीवन का अस्तित्व बनाने में महत्त्व :

हमारे जीवन की खुशहाली पर्यावरण पर निर्भर है। पर्यावरण पृथ्वीवासियों की साझी विरासत है पर्यावरण प्रदूषण तथा पर्यावरण असन्तुलन के विनाशकारी संकट से बचने के लिए आज मानव ने पर्यावरण की सुरक्षा की आवश्यकता का अनुभव किया है, लेकिन आज से सहस्रों वर्ष पूर्व हमारे पूर्वजों ने पर्यावरण संकट का अनुमान लगा लिया था और उसे सुरक्षित रखने का उपदेश भी दिया था।

चरक के शब्दों में :

"स्वस्थ जीवन के लिए शुद्ध वायु, जल तथा मिट्टी आवश्यक कारक हैं।"

महाकवि कालिदास ने

'अभिज्ञान शाकुन्तलम्' तथा 'मेघदूत' जैसे अमर काव्यों में मन पर पर्यावरण के प्रभाव को प्रदर्शित किया है।

कौटिल्य के शब्दों में

"राज्य की स्थिरता पर्यावरण की स्वच्छता पर निर्भर करती है।"

मानवीय सोच में बदलाव का महत्त्व :

हम सभी अपने भौतिक स्वार्थ में भविष्य की उपेक्षा करते हैं। भौतिक संसाधनों ने प्राकृतिक संसाधनों का दोहन किया है। यही कारण है कि बढ़ता पर्यावरणीय असन्तुलन विनाश को जन्म दे रहा है मौसम में बढ़ती नमी, रेगिस्तान में बर्फबारी, बर्फीली चोटियों का पिघलना, सागरों के जल का बढ़ना, नदियों में पानी का सूखना, फसलों का खड़े-खड़े नष्ट हो जाना आदि ने मानव को विचलित करना शुरू कर दिया है। इसलिए पर्यावरण की आवश्यकता ने विचारों में झंझावात पैदा कर दिया है। बुजुर्गों को चाहिए कि बालकों को बचपन से ही पेड़-पौधे लगाने के लिए प्रेरित करें।

पर्यावरण की शिक्षा का महत्त्व इसलिए और भी अधिक बढ़ गया है कि मनुष्य पर्यावरण के प्रति संवेदनशील हो चुका है। उसे पता है कि यदि खुली हवा में साँस न ली जा सके तथा शुद्ध पानी न पिया जा सके और स्वच्छ भोजन न खाया जा सके तो सारा आर्थिक विकास, औद्योगिक प्रगति किसी काम की नहीं है। अतः पर्यावरण की शिक्षा पर ही हमारा वर्तमान एवं भविष्य दोनों निर्भर हैं।

पर्यावरण शिक्षा के उद्देश्य

कोठारी कमीशन का उद्देश्य :


Edit with WPS Office

कोठारी कमीशन (1966) ने तथा राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) ने पर्यावरण शिक्षा के उद्देश्यों के लिए संस्तुति की थी कि छात्रों को भौतिक तथा जैविक पर्यावरण के सम्बन्ध में जानकारी दी जानी चाहिए तथा विद्यालय के अध्ययन-विषयों के साथ पर्यावरण शिक्षा को भी शामिल किया जाना चाहिए।

मानव पर्यावरण (जून, 1972) का उद्देश्य :

1972 में जब अन्तरराष्ट्रीय सम्मेलन हुआ था तो पर्यावरण संरक्षण के सुधार एवं रख रखाव की बात भी शामिल की गयी थी जिसमें सबसे ज्यादा महत्त्व पर्यावरण की शिक्षा को दिया गया था।

तीन वर्ष बाद बेलग्रेड (अक्टूबर, 1975) ने अन्तरराष्ट्रीय संगोष्ठी आयोजित की जिसमें 60 राष्ट्रों से 96 लोगों ने भागीदारी की थी। इसमें 10 दिन तक विभिन्न मुद्दों पर विस्तारपूर्वक चर्चा की गयी जिनमें उद्देश्य, विषय-वस्तु, शिक्षक प्रशिक्षण आदि महत्त्वपूर्ण विषय शामिल किये गये थे। इनका उद्देश्य विश्व-स्तर पर पर्यावरण की समस्याओं को सुलझाना था।

पर्यावरण और प्रदूषण

वायु प्रदूषण (Air Pollution)

हम सभी जीवधारियों के लिए सबसे अधिक आवश्यकता वायु की होती है। वायुमण्डल में नाइट्रोजन 78.08 प्रतिशत, ऑक्सीजन 20.94 प्रतिशत, ऑर्गन 0.93 प्रतिशत, कार्बन-डाइ-ऑक्साइड 0.03 प्रतिशत तथा अन्य गैसें 0.02 प्रतिशत पायी जाती हैं। इनमें परिवर्तन होने से वायुमण्डल की सम्पूर्ण व्यवस्था अव्यवस्थित हो जाती है।

सामान्य शब्दों में वायु प्रदूषण के अन्तर्गत धुआँ, धूल, गैसों, जैविक तथा अजैविक पदार्थों के ठोस व तरल अंश शामिल हैं। जंब हानिकारक धूल, धुआँ, गैस, वायु में मिल जाते हैं तब उसे वायु प्रदूषण कहते हैं।

वायु प्रदूषण के स्रोत-वायु प्रदूषण के मुख्य रूप से दो स्रोत होते हैं प्राकृतिक प्रदूषण एवं मानव निर्मित प्रदूषण।

प्राकृतिक प्रदूषण के स्रोत (Natural Sources of Pollution)-

प्राकृतिक प्रदूषण अनावश्यक तथा आकस्मिक होते हैं, जैसे-ज्वालामुखी विस्फोट, चट्टानों का बिखरना, लकड़ियों के घर्षण से जंगलों में आग लगना, बरसात में बिजली का गिरना प्राकृतिक आपदाएँ हैं। इन्हें रोक पाना मुश्किल होता है, लेकिन मानव जाति के अस्त-व्यस्त होने से बचाव तथा राहत कार्य किये जाते हैं।

मानव निर्मित प्रदूषण के स्रोत (Man Made Source of Pollution)-

रासायनिक, वैज्ञानिक, विलासितापूर्ण तथा भौतिक वस्तुओं का जितना अधिक विकास हुआ है उतना ही मानव स्वास्थ्य भयंकर बीमारियों से ग्रसित हुआ है। इसमें मुख्य भूमिका वन-विनाश की भी है।

वायुमण्डल में ऐसे विभिन्न प्रदूषक हैं जो वायुमण्डल को प्रभावित करते हैं, जैसे-कार्बन-मोनो-ऑक्साइड कारखानों, ऊर्जा उत्पादन, मोनो ऑक्साइड, नाइट्रिक एसिड स्वचालित वाहनों से अधिक उत्पन्न होते हैं। ओजोन गैस का उत्पादन मानवीय क्रियाओं से होता है जो तापमान को बढ़ाता है। इस तरह मानव खुद ही अपनी दुर्व्यवस्था का जिम्मेदार है।

वायु प्रदूषण के दुष्प्रभाव (Affects of Air Pollution)-

वायु के प्रदूषित होने से जीव-जन्तु एवं सभी प्राणी प्रभावित होते हैं तथा वायु प्रदूषण से ही भौतिक पर्यावरण, जलवायु, मौसम तथा वायु आदि भी प्रभावित होते हैं। जल और शुद्ध वायु स्वस्थ जीवन का आधार है। एक स्वस्थ व्यक्ति एक दिन में 22

Edit with WPS Office

हजार बार साँस लेकर लगभग 16 किलोग्राम वायु का प्रयोग करता है जिसकी ऑक्सीजन गैस रुधिर संचार को बनाये रखती है। लेकिन वायु प्रदूषित होने से हम सभी के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव बढ़ता जा रहा है। वायु प्रदूषण के प्रभाव को निम्न रूपों में समझ सकते हैं, जैसे-

स्वास्थ्य पर प्रभाव-

श्वसन-प्रक्रिया के अन्तर्गत प्रदूषित वायु के शरीर में प्रवेश करने से सबसे ज्यादा बुरा प्रभाव मनुष्य के स्वास्थ्य पर पड़ता है तथा जिन व्यक्तियों की प्राकृतिक बनावट कमजोर होती है वे ज्यादा कुप्रभावित होते हैं। इस समय वायु प्रदूषण की समस्या पूरे विश्व में है, लेकिन भारत में सबसे ज्यादा प्रभावित शहर कानपुर और दिल्ली हैं। दिल्ली में प्रतिवर्ष लगभग 10000 व्यक्ति अशुद्ध वायु से काल-कवलित होते जा रहे हैं क्योंकि वायु प्रदूषण का प्रभाव सबसे ज्यादा श्वसन तन्त्र पर पड़ता है। फेफड़ों का रोग, गले में खराश, साँस में बेचैनी, अस्थमा, टी.बी., निमोनिया, फेफड़ों का कैंसर इत्यादि भयंकर रोग वायु प्रदूषण से मानव जीवन को ग्रसित कर रहे हैं।

जीव-जन्तुओं पर प्रभाव-

मानव-जीवन की तरह ही जीव-जन्तु भी वायु से प्रभावित होते हैं। छोटे जीव-जन्तुओं की मृत्यु हो जाती है तथा बड़े जानवर बीमार पड़ जाते हैं। फ्लोराइड यौगिक प्रदूषक घास के आसपास एकत्रित होने से खाद्य श्रृंखला में प्रयुक्त हो जाते हैं तथा जीवों पर विषाक्त प्रभाव डालते हैं। फलतः हड्डियाँ कमजोर हो जाती हैं तथा फ्लुरोसिस रोग हो जाता है।

पेड़-पौधों एवं वनस्पतियों पर प्रभाव -

जितने भी खाद्य पदार्थ हैं वृक्ष, फल-फूल, फसल, सब्जियाँ प्रदूषित वायु से सभी प्रभावित हो रहे हैं जिनमें सल्फर-डाइ-ऑक्साइड, कार्बन-मोनो-ऑक्साइड, अम्लीय वर्षा, धूप, कोहरा, ओजोन परत आदि पौधों तथा वनस्पतियों के विकास को नष्ट कर रहे हैं। पौधों में प्रकाश संश्लेषण की क्रिया कम हो जाती है और जब पौधे या वनस्पतियाँ खुलकर श्वास नहीं ले पाते तो पत्तियों का गिरना, सूखना, टूटना नकारात्मक प्रतिक्रियाएँ शुरू हो जाती हैं।

वायुमण्डल पर प्रभाव-

वायुमण्डल पर वायु प्रदूषण का नकारात्मक प्रभाव सबसे अधिक पड़ता है। नाइट्रोजन ऑक्साइड, कार्बन-डाई-ऑक्साइड, क्लोरोफ्लोरो कार्बन ग्रीन हाउस प्रभाव उत्पन्न करने वाली गैसों में वृद्धि के कारण भूमण्डल के तापमान में लगातार वृद्धि हो रही है जिसका असर यह होगा कि हिमखण्डों के पिघलने की दर बढ़ेगी तथा समुद्री जलस्तर बढ़ने से तटवर्ती क्षेत्र जलमग्न हो जायेंगे। वायु प्रदूषण के प्रभाव के कारण औद्योगिक नगरों में अत्यधिक तापमान से अम्लीय वर्षा होती है क्योंकि भयंकर तरीके से जब वायु प्रदूषित होती है तभी अम्लीय वर्षा होती है।

इसके अतिरिक्त वायुयान, जेट तथा सुपरसोनिक वायुयान उड़ान पर नाइट्रोजन ऑक्साइड गैस छोड़ते हैं जो ओजोन परत को नष्ट करती है, जिससे सूर्य की किरणों का दुष्प्रभाव भी पड़ता है। परिणाम यह होता है कि धरती के तापमान में वृद्धि होती है।

भवनों पर प्रभाव-

स्वाभाविक-सी बात है कि भवन हमेशा खुले ही होते हैं। इन्हें

ढँका नहीं जा सकता जिसकी वजह से आज बड़ी-बड़ी ऐतिहासिक धरोहरें धूल-धूसरित तथा अपने स्वाभाविक रंग से रंगविहीन हो चुकी हैं। उदाहरणार्थ, ताजमहल का बाह्य आकर्षण मथुरा तेल शोधनशाला के प्रदूषण से पहले जैसा नहीं रहा।

अन्य प्रभाव-

प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष, दृश्य-अदृश्य सभी वायु प्रदूषणों से हम प्रभावित होते रहते हैं। प्रदूषणयुक्त वायु में हाइड्रोजन सल्फाइड (H_2S)

Edit with WPS Office

की मात्रा कम हो जाती है जिससे सीसे से बनी वस्तुएँ काली दिखने लगती हैं तथा चाँदी की चमक भी धुँधली पड़ जाती हैं। अम्लीय वायु प्रदूषकों से मजबूत कपड़े भी कमजोर होकर फट जाते हैं।

स्वचालित वाहनों से निकलने वाला धुआँ जिसे कार्बन मोनो-ऑक्साइड कहा जाता है सबसे भयंकर कैंसर जैसे रोग को उत्पन्न करता है।

वायु प्रदूषण को नियन्त्रित करने के उपाय-

वायु प्रदूषण को नियन्त्रित करने के लिए विभिन्न तरीके, उपाय एवं नियम हैं। 'वायु प्रदूषण नियन्त्रण अधिनियम, 1981' (Air Pollution ControlAct, 1981) में वायु प्रदूषण सम्बन्धी विभिन्न नियम बताये गये हैं। इसके अतिरिक्त लोकसभा के माध्यम से 'वायु प्रदूषण निवारण एवं नियन्त्रण अधिनियम, 1981' पारित किया गया है। नियन्त्रण मण्डल को प्रदूषण नियन्त्रण सम्बन्धी अधिकार दिये गये हैं।

पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1986 (Environmental ProtectionAct, 1986) के अन्तर्गत नियमों का पालन न करने पर दण्ड की व्यवस्था है। पर्यावरण संरक्षण अधिनियम इसीलिए लागू किया गया है। नगरों में औद्योगिकीकरण की वजह से ईंट के भट्ठो के धुएँ से सबसे बड़ी समस्या जनसंख्या विस्फोट की है। जिससे मानव का स्वस्थ रहना मुश्किल हो गया है। संरक्षण अधिनियम, 1986 पर्यावरण के नियमों का पालन न करने से दण्ड का प्रावधान लागू करता है।

जल प्रदूषण (Water Pollution)

हम सभी जानते हैं कि जल ही जीवन है क्योंकि मानव की उत्पत्ति भी जल से हुई है। इन्सान को जीवित रहने के लिए भोजन से ज्यादा जल और वायु की आवश्यकता है। यहाँ तक कि मनुष्य के शरीर की बनावट में 65 प्रतिशत पानी है। शरीर और मस्तिष्क में पानी से बने द्रव सुरक्षा कवच प्रदान करते हैं। जितने भी खाद्य पदार्थ हैं पानी के अभाव में निर्मित नहीं किये जा सकते हैं।

पेड़-पौधों तथा वनस्पतियों में हरियाली सिर्फ पानी की वजह से है। औसतन वृक्षों में 40 प्रतिशत तक पानी होता है। जलीय पौधों में जल की मात्रा 90 प्रतिशत होती है। ककड़ी तथा खीरा में 95 प्रतिशत पानी रहता है।

जल प्रदूषण की परिभाषा (Definition of Water Pollution)

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार,

"प्राकृतिक तथा अन्य स्रोत जब विजातीय पानी में मिल जाते हैं तब जीवधारियों तथा वनस्पतियों के लिए हानिकारक होते हैं क्योंकि ऑक्सीजन की मात्रा कम हो जाती है जिसके दुष्प्रभाव होते हैं और महामारियों फैलती हैं।"

पी. विवियर (1958) के अनुसार, "प्राकृतिक या मानवजनित कारणों से जल की गुणवत्ता में इस प्रकार के परिवर्तनों को प्रदूषण कहा जाता है जो आहार मानव एवं जानवरों के स्वास्थ्य, कृषि, मत्स्य या आमोद-प्रमोद के लिए अनुपयुक्त या खतरनाक होते हैं।"

सी.एस. साउथविक (1976) के अनुसार, "मानवीय क्रियाकलापों अथवा प्राकृतिक (जलीय) प्रक्रियाओं द्वारा जल के रासायनिक, भौतिक तथा जैविक गुणों में परिवर्तन को जल प्रदूषण कहते हैं।"

जल प्रदूषण के स्रोत-

धरती पर जल 75 प्रतिशत है। कुछ नकारात्मक स्रोतों के माध्यम से जब जल की गुणवत्ता में ह्रास हो जाता है तो उसे जल प्रदूषण का स्रोत माना जाता है। इसे निम्न सन्दर्भों में व्यक्त किया जा सकता है-

Edit with WPS Office

समुद्री जल-

सम्पूर्ण धरती पर 93 प्रतिशत जल समुद्री है। यह जल नमकीन होने की वजह से कम उपयोगी होता है तथा नदियों का गन्दा पानी समुद्र में गिरता है।

प्राकृतिक स्त्रोत-

प्राकृतिक स्त्रोत के अन्तर्गत बहुत सारी प्राकृतिक रचनाएँ तथा समस्याएँ हैं। ज्वालामुखी का फटना, मृदा अपरदन, भूकम्प आने के बाद ऐसे विभिन्न स्त्रोत हैं, जिनसे जल प्रदूषित होता है, जैसे-मरे हुए जानवर, सड़ी हुई पत्तियाँ आदि।

मानवीय स्त्रोत-

मानवीय क्रियाकलापों के अन्तर्गत बहुत सारी विडम्बनाएँ हैं, जिससे जल भयंकर रूप से दूषित होता है। जैसे कूड़े-कचरे को बाहर फेंकने से बरसात के समय में गन्दगी बहकर नदियों में जाती है; शौचालय से निकला हुआ पानी नदियों में बहता है तथा कभी-कभी जलापूर्ति के लिए बिछायी गयी पाइप लाइन फट जाती है तथा अकस्मात् इनका सम्पर्क सीवरों से हो जाता है। ऐसी बस्तियों में विभिन्न रोग फैलते हैं, जैसे-पीलिया, वायरस सम्बन्धी रोग, विकलांगता, पोलियो इत्यादि ।

कृषि या खेती-बाड़ी भी एक मुख्य स्त्रोत है। उर्वरकों, कीटनाशकों तथा पेस्टीसाइड्स में विस्तृत मात्रा में पारा, सीसा, रीन, फास्फोरस, आर्सेनिक इत्यादि पदार्थ प्रयोग किये जाते हैं जिसकी वजह से खाद्य पदार्थों के सेवन से कैंसर जैसे भयंकर रोगों का खतरा बढ़ जाता है।

बहुत-से जल-स्त्रोत उद्योग तथा कारखानों के माध्यम से प्रदूषित होते रहे हैं क्योंकि उद्योगों तथा कारखानों के अपशिष्ट पदार्थ नदियों में बहाये जाते हैं इन अपशिष्ट पदार्थों से पानी दूषित होता है। दूषित पानी से हमारा जीवन प्रभावित होता है क्योंकि ये अपशिष्ट पानी में लवण, वसा, तेल इत्यादि की मात्रा बढ़ा देते हैं। इसी तरह से जूता बनाने वाली फैक्टरी, शराब बनाने के कारखाने, कीटनाशी दवाओं के कारखाने ये सभी ऐसे मानवीय स्त्रोत हैं, जिनकी वजह से पानी प्रदूषित हो रहा है।

जल प्रदूषण का प्रभाव-

जल प्रदूषण का सर्वाधिक दुष्प्रभाव मानवीय जीवन, सूक्ष्म जीव-जन्तुओं एवं पेड़-पौधों पर पड़ता है।

1. विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट के अनुसार, प्रत्येक वर्ष 6 लाख बच्चे जल प्रदूषण के शिकार होते हैं जिनमें पोलियो, डायरिया, टायफाइड, लैप्टोस्पाइरोसिस (फेफड़े का मर्ज), आमवात इत्यादि प्रमुख हैं। भारत में 35 प्रतिशत से 45 प्रतिशत मनुष्यों की मृत्यु प्रदूषित जल के कारण हो रही है।

2. प्रदूषित जल जब बहकर मिट्टी में मिल जाता है तो फसलें प्रदूषित होकर नष्ट हो जाती हैं। नदियों, झीलों, तालाबों के जल में जैविक एवं अजैविक पोषक तत्त्वों की वृद्धि होने से पेट्रीफिकेशन (सड़ना) हो जाता है। फलतः जलीय पौधे तथा जीव-जन्तुओं की संख्या में वृद्धि हो जाती है।

3. कारखानों के अपशिष्ट पदार्थ से तथा तेल के रिसाव से जलीय जन्तु मर जाते हैं। इसके अतिरिक्त भारत के 34000 गाँवों में लगभग 2.5 करोड़ व्यक्ति हैजे से पीड़ित हैं। सर्वविदित है कि राजस्थान के लोग गन्दा जल पीने से नास नामक बीमारी से ग्रसित हैं। गन्दा पानी पीने से रोगों से ग्रसित मनुष्यों की संख्या 50 प्रतिशत है तथा अविकसित देशों में दूषित जल से 80 प्रतिशत लोग बीमार पड़ रहे हैं।

जल प्रदूषण नियन्त्रण के उपाय-

1. कीटनाशकों, रासायनिकों तथा डी.डी.टी. का प्रयोग आवश्यकता के अनुसार ही करना चाहिए।


Edit with WPS Office

2. संक्रामक रोगों से ग्रस्त मनुष्यों तथा पशुओं को नदी, जलाशयों या तालाबों में नहीं नहलाना चाहिए।

3. सामान्य व्यक्तियों को कूड़ा फेंकने के लिए दो डस्टबिन रखने चाहिए। एक गीले कूड़े के लिए तथा दूसरा सूखे कूड़े के लिए, जिससे उसकी रिसाइकिलिंग की जा सके।

4. दलितों, आदिवासियों, हरिजन बस्तियों के लिए शौचालयों की व्यवस्था करनी चाहिए। इसके अतिरिक्त नगरपालिकाओं को सीवर शोधन संयन्त्रों की व्यवस्था करनी चाहिए।

5. कछुओं को नदियों एवं जलाशयों में छोड़ा जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त प्रदूषण रोकने के लिए रेडियो, टेलीविजन एवं विभिन्न संचार माध्यमों से जागरूक करना चाहिए। भारत सरकार ने जल प्रदूषण को नियन्त्रित करने के लिए सन् 1974 में विभिन्न तरह के जल प्रदूषण अधिनियम लागू किये थे। विभिन्न समाज में विभिन्न समय पर विभिन्न कानून पारित किये गये थे।

1. दि ऑब्सट्रक्शन ऑफ फेयरवेज ऐक्ट, 1881

2. दि नार्थ इण्डिया कैनाल एवं ड्रेनेज ऐक्ट, 1873

3. दि इण्डियन फिशरीज ऐक्ट, 1897

केन्द्र सरकार ने केन्द्रीय प्रदूषण नियन्त्रण बोर्ड के तत्त्वावधान में गंगा नदी की गन्दगी को स्वच्छ करने के लिए केन्द्रीय गंगा प्राधिकरण का गठन किया है। इसके तहत गंगा ऐक्शन प्लान के अन्तर्गत विभिन्न कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं लेकिन इसका परिणाम निराशाजनक है। जल प्रदूषण को रोकने के लिए कार्यक्रम की अपेक्षा मानव समाज, राज्य, राष्ट्र सभी की जिम्मेदारी है।

मृदा प्रदूषण (सॉइल पॉल्यूशन)

वायु और जल की ही तरह भूमि या मिट्टी इन्सान के जीवन में बहुत महत्त्वपूर्ण है। मिट्टी प्राकृतिक वातावरण का एक आधारभूत तत्त्व है। जब कचरा, हानिकारक रसायन, कारखानों के अपशिष्ट भूमि को प्रदूषित करते हैं, उसी को मृदा प्रदूषण (सॉइल पॉल्यूशन) कहते हैं।

इसके अतिरिक्त और भी विभिन्न कारण हैं, जैसे-कृषि की उर्वरा शक्ति को बढ़ाने के लिए जिन रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग किया जाता है और औद्योगिक कचरों में भी विभिन्न प्रकार की ऐसी धातुएँ पायी जाती हैं जो मानव-जीवन के लिए हानिकारक हैं, क्योंकि इसमें आर्सेनिक, पारा, सीसा, कैडमियम आदि सम्मिलित हैं, जो स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हैं।

मृदा प्रदूषण की परिभाषा

डेट वायलर के शब्दों में - "मानव के द्वारा मृदा के भौतिक, रासायनिक तथा जीव रासायनिक स्वरूप में परिवर्तन से मृदा-निर्माण की अपेक्षा मृदा-विनाश अधिक हुआ है। यह मृदा-विनाश ही मृदा प्रदूषण है।"

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि जब भौतिक, जैविक, अजैविक, रासायनिक कारणों से मृदा की गुणवत्ता नष्ट होती है तथा उसका प्रभाव पेड़-पौधों, वनस्पतियों तथा मनुष्यों पर पड़ता है, उसी को मृदा प्रदूषण कहते हैं।

मृदा प्रदूषण के विभिन्न स्रोत-

मृदा प्रदूषण के अनेक स्रोत हैं जो विभिन्न वर्गों में विभाजित हैं। जब हमारी प्राकृतिक संरचनाओं में विकृति आ जाती है तब विभिन्न स्रोतों से मृदा प्रदूषण फैलता है, जैसे-जैविक, अजैविक, भौतिक, रासायनिक इत्यादि।

घरेलू अपशिष्ट-


Edit with WPS Office

स्वाभाविक-सी बात है कि घरों से विभिन्न प्रकार की वस्तुएँ अपशिष्ट के रूप में निकलती हैं, जैसे-प्लास्टिक, धूल, मिट्टी, विभिन्न धातुएँ, फलों एवं सब्जियों के छिलके, बचे हुए जूठन, मांस, मछली आदि के अपशिष्ट को गीले कचरे में शामिल किया जाता है। यह सभी पदार्थ नालियों के द्वारा बाहर फेंके गये अपशिष्ट के माध्यम से मिट्टी में मिलकर उसे प्रदूषित करते हैं।

नगरपालिका का कचरा -

नगरपालिका के कूड़े में भयंकर रूप से गन्दगी का समावेश रहता है। सबसे कष्टसाध्य बात यह है कि लापरवाही के कारण ये लोग गन्दगी को खोलकर रखते हैं, कई जगहों पर नाली के कूड़े एकत्रित करके उन्हें हटाया ही नहीं जाता है जिनमें विभिन्न पदार्थ शामिल रहते हैं, जैसे-औद्योगिक केन्द्रों का कूड़ा, उत्सर्जित पदार्थ, मल-मूत्र तथा विभिन्न सड़े-गले पदार्थ आदि। इन विभिन्न रासायनिक तत्त्वों से मृदा प्रदूषित होती है।

प्लास्टिक से प्रदूषण-

कुछ प्लास्टिक रंगीन होते हैं जो मिट्टी के साथ मिलकर मृदा को प्रदूषित करते हैं तथा ऐसी भूमि में फसल उगने से कैंसर का खतरा बढ़ जाता है। प्लास्टिक में सबसे हानिकारक बात यह है कि यह अपघटित नहीं होता है।

कृषि-सम्बन्धी कचरा-

कृषिजन्य कचरे का सम्बन्ध हमेशा रासायनिक खाद्य पदार्थ डी.डी.टी., बी.एच.सी., हेप्टाक्लोर एवं विभिन्न उर्वरकों से है। रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग से कृषि में पाये जाने वाले कीड़े-मकोड़े मर जाते हैं तथा उन स्थानों की भूमि को प्रदूषित करते हैं।

इन सबके अतिरिक्त और भी अपशिष्ट होते हैं, जैसे डिटर्जेण्ट का पानी, कारखानों, मिलों और फैक्टरियों का अपशिष्ट तथा ज्वालामुखी की सक्रियता के समय मैग्मा और लावा निकलता है जो धरती पर गिरकर मिट्टी को प्रदूषित करता है।

मृदा प्रदूषण के दुष्प्रभाव-

अपशिष्ट पदार्थों से भूमि में जो नकारात्मक ऊर्जा का संचार होता है और जो प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से मानव जीवन को प्रभावित करता है उसी को मृदा प्रदूषण कहते हैं, जो निम्न प्रकार से हैं-

मानव जाति पर प्रभाव-

मृदा प्रदूषण का सर्वाधिक दुष्प्रभाव मानव-जीवन पर पड़ता है, जैसे-रासायनिक खाद्य उर्वरक डी.डी.टी. का अपघटन न होने के कारण जल एवं खनिजों के अवशोषण के साथ प्रदूषक पौधों में चले जाते हैं और पौधों तथा अनाज के माध्यम से मानव शरीर को रोगी बना देते हैं।

इसके अतिरिक्त कूड़े-कचरे के एकत्रित होने से चूहे, मच्छर एवं मक्खियों से संक्रमण फैलता है, जिनके कारण टी.बी., मलेरिया, हैजा, आँखों के रोग, पेचिश आदि बीमारियाँ फैलती हैं।

वनस्पति पर प्रभाव-

सल्फर-डाइ-ऑक्साइड सल्फर के यौगिक जल से क्रिया करके अम्ल बनाते हैं और मृदा को अति अम्लीय बना देते हैं जो वनस्पति के लिए हानिकारक होता है। विभिन्न कीटनाशी रसायनों के छिड़काव से पौधों में प्रकाश संश्लेषण की क्रिया धीमी हो जाती है जिससे वनस्पतियों का उगना बन्द हो जाता है। जहाँ पर खनन कार्य होता है वहाँ पर मलबे के ढेर से वनस्पतियों उग ही नहीं सकतीं, फलतः वायु भी प्रदूषित रहती है।

प्राकृतिक सौन्दर्य पर प्रभाव-

भूमि प्रदूषण का दुष्प्रभाव प्राकृतिक सौन्दर्य तथा नवनिर्मित मकानों पर भी पड़ता है। आगरा का ताजमहल इस बात का गवाह


Edit with WPS Office

है कि धूल की वजह से उसका स्वाभाविक सौन्दर्य नष्ट हो रहा है। वनस्पति का हास होने के कारण प्राकृतिक सौन्दर्य समाप्त हो जाता है तथा भूमि प्रदूषण के कारण प्राकृतिक सौन्दर्य में विकृति आ जाती है।

कृषि पर प्रभाव-

मृदा प्रदूषण से कृषि सर्वाधिक प्रभावित होती है। कीटनाशक आदि हानिकारक पदार्थ मृदा में एकत्रित होकर मनुष्य की खाद्य श्रृंखला में फसलों, सब्जियों, अण्डों इत्यादि द्वारा खाने में आ जाते हैं और कई बीमारियों को जन्म देते हैं। विभिन्न अपशिष्टों के एकत्रित होने से उत्पादकता कम हो जाती है तथा भूमि बंजर हो जाती है।

अत्यधिक जनसंख्या वृद्धि भी प्रदूषण का कारण है क्योंकि जितनी अधिक जनसंख्या बढ़ती है वह उतना ही प्रदूषण फैलाती है।

मृदा प्रदूषण नियन्त्रण के उपाय-

मृदा प्रदूषण हमेशा कूड़ा-करकट के एकत्रित होने से तथा ठोस अपशिष्ट पदार्थों के निस्तारण से फैलता है। इस भयंकर समस्या के समाधान के लिए निम्नलिखित सुझाव नीचे दिये जा रहे हैं। मृदा प्रदूषण पर नियन्त्रण इसलिए भी आवश्यक है कि मानव समुदाय का अस्तित्व मिट्टी पर ही निर्भर है।

1. मानव जाति को रोगों से मुक्त करने के लिए डी.डी.टी. के प्रयोग पर अतिशीघ्र रोक लगा देनी चाहिए।

2. पशुओं के अवशेषों तथा विभिन्न प्रकार की फेंकी हड्डियों को धारक के रूप में प्रयोग करना चाहिए। पशु अवशेषों से चर्बी का प्रयोग साबुन बनाने में किया जाता है। उसका प्रोटीन पशु चारे में होता है।

3. ऐसे बहुत-से अपशिष्ट पदार्थ होते हैं जिन्हें हम जला भी सकते हैं लेकिन इतना ध्यान रहे कि वायु प्रदूषित न होने पाये। जलाने से लाभ यह होता है कि कम-से-कम 80 प्रतिशत कूड़ा-करकट (अपशिष्ट) नष्ट हो जाता है।

4. जो अपशिष्ट ठोस न हों पानी में घुलनशील हों उनका निस्तारण महासागर में करना चाहिए।

5. बहुत-सी फेंकी वस्तुओं की Recycling करनी चाहिए, जैसे-प्लास्टिक, कागज, काँच के टुकड़े, लोहे, फटे कपड़े इत्यादि।

6. अपशिष्ट पदार्थों को इधर-उधर फेंकने के बजाय उर्वरक में प्रयोग करना चाहिए।

7. किसानों को जागरूक बनाया जाये तथा भूमि प्रदूषण की जानकारी दी जाये। उन्हीं कीटनाशकों का प्रयोग उचित मात्रा में किया जाये जो घुलनशील हों।

समुद्री प्रदूषण

आज के भौतिक एवं सभ्य जगत में कम-से-कम अरबों टन अपशिष्ट समुद्र में फेंक दिया जाता है जिनमें निम्न तरह के अपशिष्ट होते हैं, जैसे-औद्योगिक अपशिष्ट, प्रदूषित अपशिष्ट, कीटनाशक, कारखानों का अपशिष्ट इत्यादि ।

बढ़ती जनसंख्या के साथ समुद्र की उपयोगिता तथा प्रदूषित अपशिष्ट बढ़ता जा रहा है।

सम्पूर्ण भूमण्डल का लगभग 70 प्रतिशत क्षेत्रफल समुद्र है। समुद्री पर्यावरण का 89 प्रतिशत भाग 600 मीटर से अधिक गहरा है। एक ही समुद्र कई भागों में बंटा हुआ है तथा विविधता और गहराई के अनुसार विविध जीव-जन्तु पाये जाते हैं। प्राचीन समय में समुद्र का धार्मिक महत्त्व था लेकिन आज के वर्तमान परिवेश में औद्योगिकीकरण तथा प्राकृतिक शोषण के कारण मानव जाति पर संकट एवं भयंकर बीमारियाँ बढ़ रही हैं।

समुद्री प्रदूषण की परिभाषा :

Edit with WPS Office

"जब प्राकृतिक या मानवीय क्रियाकलापों के द्वारा समुद्री जल की रासायनिक, भौतिक व जैविक गुणवत्ता में हास आये तो उसे समुद्री प्रदूषण कहते हैं।"

समुद्री प्रदूषण के कारण -

समुद्री प्रदूषण के विभिन्न कारण होते हैं, जैसे-महानगरीय प्रदूषण, औद्योगिक प्रदूषण और कीटनाशकों का प्रदूषण इत्यादि ।

औद्योगिक प्रदूषण-

वैसे तो प्रदूषण के विभिन्न स्रोत होते हैं, लेकिन औद्योगिक प्रदूषण सबसे ज्यादा हानिकारक होता है। मछलियाँ समुद्री प्रदूषण से प्रदूषित होती हैं। जब इन्हीं मछलियों को इन्सान खाता है तो भयंकर बीमारियों का शिकार होता है तथा रीढ़ की हड्डियाँ कमजोर हो जाती हैं और कभी-कभी मृत्यु भी हो जाती है। समुद्र जैसा विशालकाय पानी का स्रोत भयंकर प्रदूषण से ग्रस्त हो गया है क्योंकि समुद्र में विभिन्न परमाणु विस्फोट होते रहते हैं जिनकी संख्या लगातार बढ़ती जा रही है जिससे समुद्र का अस्तित्व खुद खतरे में है।

प्राकृतिक प्रदूषण-

ज्वालामुखी विस्फोट से लावा, राख, गैसें व विभिन्न रसायनों एवं पदार्थों से युक्त गरम जल समुद्र को प्रदूषित करते हैं। समुद्र के किनारे लहरों से होने वाले अपरदन से जल के साथ विभिन्न हानिकारक पदार्थ आकर पानी में अशुद्धियाँ फैलाते हैं। अन्तर सिर्फ इतना है कि जल प्रदूषण की तुलना में प्राकृतिक प्रदूषण कम होते हैं क्योंकि समुद्र में कुछ ऐसी प्राकृतिक शक्तियाँ हैं जो खुद ही पानी को शुद्ध कर लेती हैं।

समुद्र में परिवहन का प्रदूषण-

समुद्र में परिवहन होने से भयंकर तरीके से पानी प्रदूषित हो रहा है। तेल टैंकरों के टूटने, फटने तथा युद्धों में डुबाये जाने से समुद्री पर्यावरण क्षतिग्रस्त हो रहा है। समुद्र में तेल एवं पेट्रोलियम के मिश्रण से समुद्री जीव-जन्तुओं की मृत्यु हो जाती है।

सन् 1980 के दशक में 60 लाख टन कच्चा तेल प्रत्येक वर्ष समुद्र में गिरता था। वर्तमान समय में भी ऐसी घटनाएँ होती रहती हैं। सबसे भयंकर तरीके से तेल का फैलाव मार्च, 1989 एक्सन बाल्डर टैंकर से यू. एस. ए. अलास्का में प्रिन्स विलियम साउण्ड में हुआ था, जिससे 20 लाख टन से अधिक तेल समुद्र में फैल गया था।

डॉ. वाई. गुप्ता के अनुसार इस घटना से 35000 पक्षी, 10000 समुद्री जीव और 16 हेल मछलियाँ काल-कवलित हुई थीं।

सन् 1991 में खाड़ी युद्ध के समय में भी तेल फैल गया था जिसका दुष्परिणाम यह हुआ कि कुवैत के समीप फारस की खाड़ी प्रदूषित हो गयी जिससे लाखों समुद्री जीव-जन्तु मर गये थे।

कीटनाशकों का प्रदूषण -

बढ़ती हुई आबादी के भोजन के लिए अधिक फसल उगाने की आवश्यकता है किन्तु अब धरती में इतनी क्षमता नहीं है इसलिए कीटनाशकों का प्रयोग ज्यादा किया जाता है जिसमें पोलोक्लोरेनेटिक विफिनायल, डी.डी.टी. तथा विभिन्न पौघरक्षक दवाइयाँ उर्वरक व कीटाणुनाशकों के रूप में प्रयोग किया जाता है। शोध से पता चला है कि भयंकर प्रदूषण आज पूरे विश्व भर में फैल गया है। डी.डी.टी. कीटनाशक कैंसर एवं ट्यूमर जैसे भयंकर रोगों को जन्म देता है इसलिए विकसित देशों ने इस पर प्रतिबन्ध लगा दिया है।

समुद्री प्रदूषण का प्रभाव-

समुद्री प्रदूषण के अन्तर्गत दो तरह का प्रदूषण होता है। कुछ प्रदूषणों का असर तुरन्त जीव-जन्तु एवं मानव-जीवन पर पड़ता


Edit with WPS Office

है। कुछ का असर कई वर्ष बाद प्रभावित करता है। जैसे-

1. कभी-कभी टैंकरों से तेल रिसकर समुद्र की ऊपरी सतह पर फैल जाता है जिसको पीने से समुद्री पक्षियों की मृत्यु हो जाती है तथा कभी-कभी आग लगने का भी भय बना रहता है। समुद्र के अन्दर जो जीव रहते हैं, तेल के रिसाव से उन्हें ऑक्सीजन नहीं मिल पाता। तेल के फैलाव से प्रत्येक वर्ष 30 हजार से लेकर 2.5 लाख पक्षी मर जाते हैं। समस्या यह है कि पक्षियों के मरने से भी वायु प्रदूषित होती है।

2. प्रदूषित जल में स्नान करने से श्वास सम्बन्धी रोग, कुष्ठरोग, चर्म रोग आदि फैलने का खतरा बढ़ जाता है। यहाँ तक कि मछुआरों का जीवन-निर्वाह प्रभावित होता है और समुद्री पर्यटकों की संख्या कम हो जाती है।

3. समुद्री प्रदूषण से समुद्री वनस्पति लगभग मृतप्राय हो चुकी है। सबसे ज्यादा प्रभाव तेल के रिसाव से या टैंकरों के फटने से होता है। तेल की परत जमने से पौधों का प्रकाश संश्लेषण नहीं हो पाता। एरोमेटिक हाइड्रोकार्बन वनस्पतियों के ऊतकों में प्रवेश कर जाते हैं, जिससे वनस्पतियों का विकास नहीं हो पाता है इसके अतिरिक्त समुद्रों में कचरा प्लास्टिक फेंकने से कम-से-कम 25 लाख समुद्री जीव-जन्तु मर जाते हैं।

4. औद्योगिक अपशिष्ट तथा विभिन्न तरह के रसायनों, जैसे-सायनाइड, पारा, सीसा आदि का समुद्र में प्रवेश कर जाने से संक्रमित समुद्री भोजन से मानव स्वास्थ्य पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

उदाहरण- 1950-60 के दशक में जापान शहर के समीप मीनामाता खाड़ी में पारायुक्त अपशिष्ट पदार्थों के कारण असंख्य लोगों की मौतें हुई थीं। हाइड्रोकार्बन व वेन्जपाइरिन के समुद्री भोजन श्रृंखला में मिल जाने और उन समुद्री जीवों का सेवन करने से मनुष्यों में कैंसर का खतरा बढ़ जाता है।

समुद्री प्रदूषण नियन्त्रण के उपाय-

समुद्री प्रदूषण को नियन्त्रित करने के लिए विभिन्न सुझाव एवं समाधान निकाले जा सकते हैं-

1. जहाज को चेक करने के बाद ही तेल को भेजा जाये। इससे तेल रिसाव से छुटकारा मिल सकता है।

2. यदि समुद्र में तेल का फैलाव हो गया है तो आर्थोवेक्टर के माध्यम से निस्तारण किया जा सकता है।

3. परमाणु परीक्षण के लिए अलग से स्थानों का चयन करना चाहिए। प्रदूषण से बचने के लिए समुद्र में परमाणु परीक्षण नहीं करना चाहिए।

4. समुद्री जैव विविधता के संरक्षण के लिए अपशिष्ट पदार्थों को फेंकना नहीं चाहिए।

5. प्लास्टिक के विभिन्न कारखानों को तत्काल बन्द करवा देना चाहिए। इसकी जगह जूट का प्रयोग करना चाहिए।

6. किसी भी तरह का कीटनाशक अथवा अपशिष्ट पदार्थ समुद्र में न फेंका जाये, इस पर ध्यान देना चाहिए।

ध्वनि प्रदूषण (Noise Pollution)

भौतिकवादी एवं मशीनीयुग में ध्वनि प्रदूषण ने भयंकर बीमारी का रूप ले लिया है। दिन के 24 घण्टों में एक भी पल सुकून-भरा नहीं होता। चारों तरफ शोर और असंख्य आवाजें हृदय की गति को बढ़ाती रहती हैं। अवांछित ध्वनि को शोर कहते हैं जिससे मानव की श्रवणेन्द्रियों तथा स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। Noise शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा से हुई। शोर से बेचैनी और घबराहट भी होती है।

Edit with WPS Office

ध्वनि प्रदूषण की परिभाषा

विभिन्न विद्वानों ने ध्वनि प्रदूषण के विषय में अपने-अपने मत निम्न प्रकार से प्रकट किये हैं-

विल्सन के अनुसार - "कोई भी आवाज जो उसे ग्रहण करने वाले के लिए आवांछित हो शोर कहलाती है।"

डेट वायलर के अनुसार - "पर्यावरण में शोर इस सीमा तक फैल जाये कि जनसामान्य को क्षुब्ध या चिड़चिड़ा करने लगे तो उसे शोर प्रदूषण कहेंगे।" सिम्मन्स के अनुसार, "निरर्थक अथवा अनुपयोगी ध्वनि ही शोर प्रदूषण है।"

मैक्सवेल के अनुसार - "शोर वह कोई भी ध्वनि है जो कि अवांछनीय है। यह वायुमण्डलीय प्रदूषण का एक साधारण प्रकार है।"

ध्वनि प्रदूषण के स्रोत (Sources of Noise Pollution) :

ध्वनि प्रदूषण के वैसे बहुत स्रोत हैं लेकिन दो स्रोत मुख्य हैं-

1. प्राकृतिक स्रोत

2. कृत्रिम स्रोत

प्राकृतिक स्रोत-

प्राकृतिक स्रोत प्राकृतिक हलचलों से उत्पन्न होते हैं, जैसे-बादलों की गरज, ऊँचे पर्वतों से गिरते जल या पत्थर, भूकम्प या ज्वालामुखी के फटने की आवाज, लेकिन इन सभी का प्रभाव क्षणिक होता है। प्राकृतिक हादसों के बाद प्रकृति खुद को सन्तुलित कर लेती है।

कृत्रिम स्रोत-

जितना ज्यादा हमारा भौतिक विकास हुआ है, कहीं-न-कहीं उसका नकारात्मक असर भी हुआ है। आधुनिक वैज्ञानिक सभ्यता में बेवजह के ध्वनि प्रदूषण के प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं-

मनोरंजन के साधन-

श्रव्य एवं दृश्य जितने भी मनोरंजन के साधन होते हैं वे सभी शोरयुक्त होते हैं। जैसे- सिनेमा, रेडियो, टेलीविजन, ग्रामोफोन आदि। इसके अतिरिक्त चुनावी मौसम, शादी-विवाह का मौसम आदि। इस तरह के वातावरण में अधिक मात्रा में ध्वनि प्रदूषण उत्पन्न होता है।

घरेलू ध्वनि स्रोत-

इसके अन्तर्गत मिक्सी, वाशिंग मशीन, आटा-चक्की, वैक्यूम क्लीनर, वाटरपम्प, सिलाई मशीन इत्यादि आते हैं।

परिवहन से ध्वनि प्रदूषण-

परिवहन से जो ध्वनि प्रदूषण होता है वह आवश्यकता

से अधिक होता है जिनमें बस और ट्रक के हॉर्न की आवाज सबसे तेज होती है। वर्तमान_समय में सभी गाँव एवं शहर ध्वनि प्रदूषण से प्रभावित हो रहे हैं। इसके अतिरिक्त जब वाहन अपनी क्षमता से अधिक रफ्तार लेते हैं, तब ध्वनि और भी तेज हो जाती है।


Edit with WPS Office

खनन कार्य से प्रदूषण-

खनन कार्य के समय कभी-कभी खानों के खिसकने से धमाके होते हैं तथा खनन कार्य में सिर्फ खनाई ही नहीं होती उसमें विभिन्न उपकरणों का प्रयोग भी होता है। उदाहरणस्वरूप-क्रेन, ड्रिलिंग मशीन, कम्प्रेसर, ट्रैक्टर, पम्पसेट, एक्सकेवेटर इत्यादि।

आतिशबाजी-

खासतौर से दीपावली के अवसर पर, शादी-विवाह के माहौल में, मैच में भारत की जीत होने पर तथा चुनाव जीतने पर लोग आतिशबाजी करते हैं। ऐसा करने से ध्वनि प्रदूषण के अलावा वायु प्रदूषण भी फैलता है।

सुरक्षा उपकरण का प्रदूषण-

जिन हथियारों एवं उपकरणों से हमारी रक्षा होती है, उनके प्रभाव से सारा विश्व प्रदूषित हो रहा है। उदाहरणस्वरूप-बारूदी सुरंग का फटना, परमाणु विस्फोट, हथियारों के परीक्षण के अतिरिक्त राइफल, मशीनगन, रॉकेट, तोप, प्रक्षेपास्त्र, लॉन्चर इत्यादि से व्यापक स्तर का शोर प्रदूषण फैलता है।

अन्य प्रदूषण-

पूजा-स्थलों पर ध्वनि विस्तारक यन्त्र, जुलूस, बैण्ड-बाजा, चुनाव प्रचार, कारखानों की मशीनों तथा राजनीतिक गतिविधियों से भी शोर प्रदूषण होता है।

ध्वनि प्रदूषण के दुष्प्रभाव-

शोर प्रदूषण का प्रभाव निर्जीव एवं सजीव दोनों प्रकार से हानिकारक है। यह एक तरह का Slow Poison (धीमा जहर) भी कहा जा सकता है। मानव को एक सभ्य प्राणी की संज्ञा दी गयी है। इससे सबसे बुरा असर मानव पर ही पड़ता है जिससे हमारी श्रवण शक्तियाँ प्रभावित होती हैं।

शोर यदि अपनी क्षमता से बाहर होता है, जैसे-180 डेसीबल की तीव्रता से ज्यादा है तो मनुष्य की मौत भी हो सकती है। इसके अतिरिक्त हमें विभिन्न रोगों का शिकार भी होना पड़ता है। जैसे- हृदयगति का बढ़ जाना, बेचैनी, घबराहट, नींद न आना, क्रोध आना, तनावग्रस्त रहना आदि। न्यूरोटिक व्यक्ति ज्यादा शोरगुल से पागल भी हो सकता है। गर्भस्थ शिशु की धड़कन भी बढ़ जाती है। इस तरह से शोर हमारे दैनिक और व्यावहारिक जीवन को प्रभावित करता है।

जीव-जन्तुओं तथा वनस्पतियों पर प्रभाव-

आज से लगभग 2500 वर्ष पहले ऐसा सुनने को मिलता था कि जनसंख्या कम होने से जीव-जन्तुओं के घोंसले घरों में या रास्तों के आसपास हुआ करते थे, लेकिन आज के भौतिक युग में आबादी बढ़ने एवं भयंकर शोर होने से विभिन्न जीव-जन्तु अपने निवास स्थान से पलायन कर चुके हैं। ध्वनि प्रदूषण से पालतू पशुओं के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है। वे रुग्ण एवं कमजोर हो जाते हैं और दूध देने की क्षमता कम हो जाती है। इसके अतिरिक्त विभिन्न वनस्पतियों का विकास रुक जाता है तथा अत्यधिक ध्वनि प्रदूषण से अंकुर ही नहीं निकलते ।

मकानों पर ध्वनि प्रदूषण का प्रभाव -

मकान के नीचे जनरेटर के सक्रिय होने से धीमी गति से मकान हिलता रहता है जिससे मकानों की आयु कम हो जाती है। ध्वनि की मात्रा तीव्र होने से शीशे टूट जाते हैं, दीवारों और छतों में दरार पड़ जाती है। परमाणु विस्फोटों से मकान में कम्पन उत्पन्न होता है। ऊँची-ऊँची इमारतों, बाँध व पुल इन सभी का आगामी जीवन क्षतिपूर्ण हो जाता है।

प्राकृतिक सौन्दर्य का नष्ट होना-

Edit with WPS Office

विस्फोटक गतिविधियों से प्राकृतिक सौन्दर नष्ट हो रहा है, बर्फीले क्षेत्रों में हिमपात बढ़ जाता है, कई बार जमीन खिसककर नीचे धंस जाती है। बाँध के बनने और सड़क निर्माण होने से ध्वनि और भी प्रदूषित हो जाती है।

ध्वनि प्रदूषण नियन्त्रण के उपाय (Measures of Noise Pollution Control)-

ध्वनि प्रदूषण को दूर करने के लिए विभिन्न उपाय किये जा सकते हैं। यदि इन्सान समस्या की उपज है तो समाधान का रास्ता भी निकाल सकता है। निम्नलिखित प्रयासों द्वारा ध्वनि प्रदूषण को कम किया जा सकता है-

1. कारखानों या फैक्टरियों की स्थापना जंगलों के आसपास या मानवीय बस्तियों से दूर होनी चाहिए। इसके अतिरिक्त 'फेरो कंक्रीट' की दीवारों से बाउन्ड्रीवाल बनाना चाहिए।

2. खनन कार्य करने वाले या मिलों में काम करने वाले मजदूरों को काम करते समय इयर मफ (कान ढकने) का प्रयोग करना चाहिए।

3. वाहनों में साइलेन्सर का प्रयोग करना चाहिए जिसकी एक आदर्श आवाज हो।

4. बस्तियों के आसपास कम-से-कम 20 किलोमीटर तक हवाई अड्डों का निर्माण नहीं करना चाहिए तथा खनन हेतु कोई कार्य नहीं करना चाहिए।

5. हरे वृक्षों में इतनी क्षमता होती है कि वे ध्वनि प्रदूषण को अवशोषित करते हैं लेकिन हरे वृक्ष लगाने से ज्यादा उनकी सुरक्षा पर ध्यान देना चाहिए तथा जनसंख्या के अनुपात में वृक्षों की संख्या में भी वृद्धि होना आवश्यक है।

6. ऊँची इमारतों के भवनों में एकोस्टिक टाइल्स का प्रयोग करने से ध्वनि अवशोषित हो जाती है। इस तरह की योजनाएँ भवन निर्माण से पहले करनी चाहिए।

रेडियोधर्मी या नाभिकीय प्रदूषण (Radioactive or Nuclear Pollution)

रेडियोधर्मी विकिरण (Radiation) उन ऊर्जासम्पन्न अदृश्य किरणों एवं कणों को कहते हैं जो रेडियोधर्मी तत्त्वों के नाभिकों के टूटने से मुक्त होते हैं। इस प्रकार के विकिरण से होने वाले प्रदूषण को रेडियोधर्मी प्रदूषण या नाभिकीय प्रदूषण कहते हैं।

रेडियोधर्मी पदार्थ (Radioactive Elements)-

यूरेनियम, थोरियम, प्लूटोनियम आदि रेडियोधर्मी तत्त्व हैं क्योंकि इनसे स्वतः रेडियोधर्मी विकिरण निकलता है। मुख्य रूप से रेडियोधर्मी विकिरण तीन प्रकार के होती हैं-

(1) a-किरणें (a-Rays):

यह केवल शरीर की ऊपरी त्वचा को भेद पाती है। ये किरणें DNA के एक या दोनों सूत्रों को खंडित कर देते हैं।

(2) B-किरणें (B-Rays):

इस प्रकार की किरणें सिजियम-137, आयोडीन-131 एवं स्ट्रॉशियम-90 के विघटन से उत्सर्जित होती हैं। ये त्वचा को बेध कर उसके नीचे के ऊतकों में पहुँच जाती हैं। इससे त्वचा कैंसर, आँख में सफेद मोतियाबिन्द (Cataract), गले का थायरॉयड कैंसर, अस्थि कैंसर और ल्यूकीमिया जैसी बीमारी होती है।

(3) y -किरणें (y-Rays):

यह विद्युत चुम्बकीय किरणें हैं, जो हमारे जीन को क्षतिग्रस्त कर सकती हैं। इससे कोशिकाओं में अपरिवर्तन हो सकता है।

Edit with WPS Office

(4) X-किरणें (X-Rays):

ये किरणें हड्डियों को नहीं पार कर सकती हैं लेकिन ऊतकों से गुजर सकती हैं। इससे त्वचा कैंसर हो सकता है।

रेडियोधर्मी प्रदूषण के कारण (Causes of Radioactive Pollution)-

रेडियोधर्मी प्रदूषण दो प्रकार के होते हैं-

(a) मानवजनित-

यह प्रदूषण मुख्यतया परमाणु संयन्त्रों से होने वाले रिसाव, प्लूटोनियम तथा थोरियम का शुद्धिकरण, नाभिकीय प्रयोग, आण्विक ऊर्जा संयन्त्र, चिकित्सा एवं औषधि विज्ञान, रेडियोधर्मी पदार्थों का उत्खनन, परमाणु बमों के विस्फोट द्वारा होता है। इसके अतिरिक्त मानव द्वारा विविध उद्देश्यों के लिए प्रयोग में लाये जाने वाले कोबाल्ट-50, स्ट्रॉशियम-60, कार्बन-14, सीजियम-137 तथा ट्रीजियम आदि द्वारा भी होता है।

(b) प्रकृतिजनित-

सूर्य की किरणों के कारण तथा पृथ्वी के गर्भ में छिपे रेडियोधर्मी पदार्थों जैसे-रेडियम-224, यूरेनियम-238, पोटैशियम-4 के कारण जो प्रदूषण होता है, वह प्रकृतिजनित प्रदूषण होता है। इसकी तीव्रता कम होने के कारण यह जीवधारियों पर कोई विशेष प्रभाव नहीं डालता।

यूरेनियम के विखण्डन से आयोडीन, सीजियम, कोबाल्ट आदि लगभग 30 अस्थायी समस्थानिक पैदा होते हैं। इसलिए स्थायित्व प्राप्त करने के लिए इनसे रेडियोधर्मी विकिरण निकलती है जो प्राणियों के शरीर में घातक प्रभाव पैदा करती है।

*रेडियोधर्मी प्रदूषण का प्रभाव (Effects of Radioactive Pollution)-

नाभिकीय विस्फोटों के पश्चात रेडियोधर्मी तत्त्व वायुमण्डल में फैल जाते हैं और पृथ्वी के धरातल पर धीरे-धीरे जमा हो जाते हैं। इसे परमाणु अवनुपात (Nuclear Fallout) कहते हैं। यह तीन प्रकार के होते हैं-

(1) स्थानीय अनुपात (Local Fallout):

स्थानीय अवपात में विस्फोट के कुछ ही घण्टे के अन्दर लगभग 160 मील के अन्तर्गत रेडियोधर्मी कण जमा हो जाते हैं।

(2) क्षोभमण्डलीय अनुपात (Tropospheric Fallout):

विस्फोट के बाद रेडियोधर्मी कण वायुमण्डल में 8 मील की ऊँचाई तक फैल जाते हैं। इसका दूरगामी प्रभाव पड़ता है।

*(3) समतापमण्डलीय अनुपात (Stratospheric Fallout) :

इस प्रकार के अवपात में 8 से 20 मील की ऊँचाई तक विस्फोट का प्रभाव पड़ता है। इससे अस्थि कैंसर, ल्यूकेमिया और अन्य फुप्फसीय रोग होते हैं।

रेडियोधर्मी प्रभाव कोशिकाओं एवं गुणसूत्रों में अत्यन्त प्रतिक्रियात्मक रासायनिक तत्त्वों को प्रविष्ट करा देते हैं। इससे आनुवंशिक पदार्थों में अवांछित परिवर्तन हो जाता है और उत्परिवर्तन जैसी दुर्घटनाएँ होती हैं।

रेडियोधर्मी विकिरण से कोशिकाएँ इस सीमा तक नष्ट हो सकती हैं कि उन्हें पुनर्जीवित नहीं किया जा सकता।

रेडियोधर्मी प्रदूषण के कारण जीन और गुणसूत्रों में हानिकारक उत्परिवर्तन होता है। बच्चों की गर्भाशय में मृत्यु हो जाती है। इस प्रदूषण का प्रभाव धीरे-धीरे कई वर्षों में लकवा, गूँगापन, बहरापन, अस्थि कैंसर, रुधिर कैंसर तथा टी.बी. के रूप में दिखाई

Edit with WPS Office

देता है।

फल-सब्जियों पर असर :

रेडिएशन के प्रभाव में आने से फलों, सब्जियों एवं खाद्य-पदार्थों में जहरीले तत्त्व पैदा हो जाते हैं। इससे पौष्टिक तत्त्व नष्ट हो जाते हैं। इनका रंग एवं स्वाद बदल जाता है। इसे खाने से मानव स्वास्थ्य पर रेडिएशन का खतरा होता है। इस प्रकार के रेडिएशन को बैकग्राउण्ड रेडिएशन (Background Radiation) कहते हैं। रेडिएशन को अवशोषित करने की क्षमता चावल, बैंगन इत्यादि में अधिक होती है। इसीलिए परमाणु संयन्त्रों के आसपास के क्षेत्रों में इसका उत्पादन नहीं किया जाता है।

रेडियोधर्मी प्रदूषण के नियन्त्रण के उपाय-

जहाँ तक सम्भव हो रेडियोधर्मी पदार्थों को समुद्र, नदी, जल आदि में विसर्जित न किया जाये।

पोटैशियम आयोडीन थायरॉयड ग्रंथि को परमाणु विकिरण से बचाता है, हालाँकि आयोडीन शरीर के अन्य अंगों की रक्षा करने में सक्षम नहीं है।

विकिरण आवश्यक विटामिन, फैटी एसिड, कैल्शियम और न्यूरो हार्मोन्स को नष्ट कर देता है। इन तत्त्वों को दोबारा प्राप्त करने के लिए प्राकृतिक, ताजे और जैविक गैर-प्रसंस्कारित भोजन का सेवन करना चाहिए।

ई अपशिष्ट/ई कचरा (Electronic Waste)

इलेक्ट्रॉनिक अपशिष्ट या ई-अपशिष्ट का अर्थ उस गौण उत्पाद से है जो इलेक्ट्रॉनिक उत्पादों के खराब होने के पश्चात कचरे के रूप में बचता है।

ई-अपशिष्ट का सम्बन्ध नवीन प्रौद्योगिकी से है। नयी प्रौद्योगिकी से प्राप्त नवीन उपभोक्ता वस्तुओं जैसे-टीवी, मोबाइल, सीडी, एसी, कम्प्यूटर आदि के बेकार होने पर फेंक दिये जाने के कारण ई-कचरा (E-waste) का निर्माण होता है।

ई-कचरे से निकलने वाले जहरीले तत्त्व और गैस मिट्टी व पानी में घुलकर उन्हें बंजर और जहरीला बना देते हैं। पुनः यही तत्त्व फसलों और जल के द्वारा हमारे शरीर में पहुँचकर बीमारियों को जन्म देते हैं।

प्रायः विकसित देशों द्वारा इस अपशिष्ट को विकासशील देशों में निपटान हेतु भेज दिया जाता है। इस प्रकार की भारी डंपिंग मानव एवं जैव पारिस्थितिकी के लिए हानिकारक है।

इलेक्ट्रोस्मॉग (Electrosmog)

इलेक्ट्रोस्मॉग ऐसा कुहासा है जो अदृश्य रहता है, किन्तु कार्य बहुत घातक करता है। विद्युत तारों तथा इलेक्ट्रॉनिक उपकरणों से निकलने वाला विद्युत चुम्बकीय विकिरण अपने आसपास के क्षेत्रों में एक अदृश्य आवरण बना लेता है, जो सभी जीवधारियों के ऊपर विपरीत असर डालता है, इसे इलेक्ट्रोस्मॉग कहते हैं।

पर्यावरण और साहित्य :

प्रकृति को साहित्य की आत्मा कहा जा सकता है। भारतीय साहित्य के इतिहास को देख लिया जाये तो पता चलेगा कि उसमें प्रकृति-चित्रण की विशेष परम्परा रही है। प्रकृति और मानव का सम्बन्ध उतना ही पुराना है, जितना सृष्टि के उद्भव और विकास का इतिहास। प्रकृति की गोद में आँखें खोलने वाला मनुष्य उसी के आँगन में पलता-बढ़ता है। इसलिए मानव और प्रकृति के बीच के अटूट सम्बन्ध की अभिव्यक्ति धर्म, दर्शन, साहित्य और कला में चिरकाल से होती रही है। चूँकि साहित्य मानव जीवन का प्रतिबिम्ब है, अतः उसके प्रतिबिम्ब में उसकी सहचरी प्रकृति का प्रतिबिम्बित होना स्वाभाविक है।

Edit with WPS Office

पर्यावरण संरक्षण में साहित्य की भूमिका अहम रही है। जो भी समाज में घटता है, उसका प्रभाव स्वाभाविक रूप से साहित्य पर भी पड़ता है। आज पर्यावरण और प्रदूषण ज्वलन्त समस्या है, लिहाजा साहित्य भी उससे अछूता नहीं है। हिन्दी साहित्य का पर्यावरण से बहुत गहरा नाता है। प्रकृति के सौन्दर्य के वर्णन से लेकर पर्यावरण चिन्ताओं तक को वैदिक काल से ही साहित्य में शामिल किया जाता रहा है। आज पर्यावरण संरक्षण बड़ा मुद्दा है और आधुनिक साहित्य में यह चिन्ता झलकती भी है।

पर्यावरणीय चेतना और साहित्य :

मानव शरीर जिन पाँच तत्वों से निर्मित है, वे प्रकृति के अनिवार्य अंग हैं अर्थात् मनुष्य प्रकृति में जन्म लेता है, इसकी मिट्टी में ही उसका पालन-पोषण होता है और इसी में वह विलीन होता है। इसीलिए प्रकृति के प्रति मानव-मन में जो प्रेम है, वह बिलकुल नैसर्गिक है। मनुष्य हमेशा अपनी मिट्टी, जलवायु और सांस्कृतिक चेतना से जुड़ा रहता है। जाहिर है उसकी अभिव्यक्ति साहित्य में जरूर होगी। हमारे धर्म, दर्शन, कला और साहित्य सभी में प्रकृति को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है।

वैदिक साहित्य और पर्यावरण :

साहित्य, वेद और धर्म के साथ प्रकृति का एक विशेष तादात्म्य है। हमारे धार्मिक अनुष्ठानों में पेड़-पौधों की महत्त्वपूर्ण भूमिका पायी जाती है। भारतीय मनीषियों ने प्रकृति को सर्वप्रमुख माना था तथा मानव के लिए कुछ विधि-विधान निर्धारित किये थे जिनका पालन करना सबके द्वारा अनिवार्य था। हमारे ऋषि-मुनि जानते थे कि पृथ्वी, जल, अग्नि, अन्तरिक्ष और वायु इन पाँच तत्वों से मानव शरीर निर्मित है। उन्हें यह भी मालूम था कि इन पंच तत्वों में से कोई एक दूषित हो जाये तो उसका दुष्प्रभाव मानव शरीर पर जरूर पड़ेगा। इसलिए प्रकृति में सन्तुलन बनाये रखना वे एक धार्मिक अनुष्ठान मानते थे। अथर्ववेद में ईश्वर से प्रार्थना की गयी है कि प्रकृति की जीव-सृष्टि का विनाश करने वाले व्याघ्र, चोर और भेड़ियों से हमारी रक्षा हो। वन्य प्रदेश, झरने एवं वायु को प्रदूषित करने वालों से हम सुरक्षित रहे। यजुर्वेद में शान्ति की प्रार्थना करते हुए मानव जीवन और प्राकृतिक जीवन में विद्यमान निरन्तर एकता का दर्शन करते हैं। ऋग्वेद का नदी सूक्त और पृथ्वी सूक्त, अथर्ववेद का आरण्य सूक्त पृथ्वी, नदी और वन एवं वनस्पतियों की रक्षा का सन्देश देते हैं। वैदिक ऋषियों ने प्रकृति के सभी कारक तत्वों को ईश्वर की संज्ञा देकर प्रकृति के महत्त्व को प्रतिपादित किया है और साथ-साथ मानव जीवन में उनके महत्त्व को भी स्वीकार किया है।

अथर्ववेद में कहा गया है कि अग्नि से धूम उत्पन्न होता है, धूम से बादल और बादल से वर्षा होती है। यहाँ यज्ञ का अर्थ प्राकृतिक चक्र को सन्तुलित रखने की प्रक्रिया है। विज्ञान की दृष्टि से भी यह तथ्य सही साबित होता है कि यज्ञ द्वारा वातावरण में ऑक्सीजन और कार्बन डाइऑक्साइड का सन्तुलन बनाये रख सकते हैं। वैदिक काल में लोग इस बात से भी अवगत थे कि वन ही अतिवृष्टि और अनावृष्टि से हमारी रक्षा कर सकते हैं। इसीलिए ऋग्वेद में वन्य क्षेत्र को बढ़ाने की बात की गयी है। बृहदारण्यकोपनिषद में जल को सृजन का हेतु कहा गया है। उसके अनुसार पंच भूतों का रस पृथ्वी है, पृथ्वी का रस जल है, जल का रस औषधियाँ है, औषधियों का रस पुष्प है और पुष्पों का रस फल है। मत्स्यपुराण में वृक्षों के महत्त्व को प्रतिपादित करते हुए कहा गया है कि दस कुओं के बराबर एक बावड़ी है, दस बावड़ियों के बराबर एक तालाब, दस तालाबों के बराबर एक पुत्र है और दस पुत्रों के बराबर एक वृक्ष होता है। हमारे पूर्वजों की यही विचारधारा इस प्रदूषण-अभिशप्त सदी में हमें अपने अतीत की बार-बार याद दिलाती है।

आधुनिक साहित्य में पारिस्थितिकी

साहित्य हमेशा समय और समाज के साथ चलता है। इसीलिए जीवन और जगत सम्बन्धी कोई भी बात या समस्या उसकी विषय-परिधि के अन्दर आती है। ब्रह्माण्ड में जो कुछ भी विद्यमान है, वह साहित्य का विषय बन जाता है। आधुनिक युग में पर्यावरण एक ज्वलन्त समस्या है। गद्य व पद्य जैसी विविध विधाओं में साहित्यकार पर्यावरण के प्रति अपनी चिन्ता दर्शा रहे हैं। संस्कृत साहित्य में कालिदास प्रकृति के अनुपम चितेरे हैं और वे अपनी कृतियों में ऋतुओं का वर्णन करके जनमानस की भावनाओं को उत्तेजित करते हैं। रामचरितमानस में तुलसीदास ने प्रकृति के जीवन्त रूप का वर्णन अपनी पूरी स्वाभाविकता एवं भव्यता के साथ किया है। आधुनिक साहित्य में प्रकृति के वर्णन के साथ-साथ प्रकृति में मनुष्य के हस्तक्षेप से होने वाली समस्याओं का भी चित्रण बड़े ही स्वाभाविक रूप से किया गया है।


Edit with WPS Office

पारिस्थितिकीवाद :

आधुनिक कालीन साहित्य में पर्यावरण सम्बन्धी अध्ययन एवं चर्चाएँ जब खूब होने लगीं तो उनके साथ एक नयी साहित्यिक प्रवृत्ति ने भी जन्म लिया जो पारिस्थितिकी के नाम से जानी गयी। पारिस्थितिकी पर्यावरण विज्ञान की वह शाखा है जिसमें विभिन्न जीव-जन्तुओं के पारस्परिक सम्बन्ध के बारे में अध्ययन किया जाता है। सन् 1960 से विश्व साहित्य में पारिस्थितिकी की चर्चा होने लगी थी। प्रकृति और मनुष्य को लेकर की गयी जागरूकता का परिणाम है समकालीन हिन्दी साहित्य की पारिस्थितिकी ।

अंग्रेजी में प्रयुक्त Ecology शब्द का पर्यायवाची शब्द है पारिस्थितिकी। ग्रीक शब्द Oikos और Logs के मेल से बना है इस प्रकार Oikos का अर्थ है आवास पर्यावरण सम्बन्धी विज्ञान। स्थान और Logs का अर्थ है विज्ञान यानी जीव-जन्तुओं का आवास स्थान अथवा पर्यावरण सम्बन्धी विज्ञान ।

हिन्दी काव्य और पर्यावरण :

आधुनिक हिन्दी काव्य का जन्म यूरोप के औद्योगिकीरण के समानान्तर हुआ है, जहाँ प्रकृति मात्र सौन्दर्य का उपादान रहकर क्रूर दृष्टि का शिकार होना आरम्भ हो जाती है। श्रीधर पाठक 'कश्मीर-सुषमा' में प्रकृति की मनोमुग्धकारी छटा बिखेरते हैं, तो 'हरिऔध' द्वारा रचित प्रिय-प्रवास में राधिका की हृदय-व्यथा प्रकृति के प्राकृतिक प्रतीकों का आश्रय लेते हैं-उपादानों में व्यंजित होती है जबकि कृष्ण भी अपनी पीड़ा की अभिव्यक्ति में प्राकृतिक प्रतीकों का आश्रय लेते हैं -

प्रकृति की छटा का सुन्दर रूप मैथिलीशरण गुप्त के 'साकेत', 'पंचवटी', 'यशोधरा', 'सिद्धराज' आदि ग्रन्थों में सुन्दर रूप में अभिव्यंजित होता है। चन्द्र-ज्योत्स्ना में रात्रिकालीन वेला की प्राकृतिक छटा का मुग्धकारी वर्णन द्रष्टव्य है-

"चारू चन्द्र की चंचल किरणें खेल रही हैं जल-थल में,

स्वच्छ चाँदनी बिछी हुई है अवनि और अम्बरतल में।"

छायावादी काव्य-शैली में प्रकृति का सूक्ष्म और उत्कट रूप दिखाई देता है। प्रकृति की भव्यता 'पन्त', 'प्रसाद' और 'निराला' की कविताओं में यत्र-तत्र दिखाई देती है। ये कवि प्रकृति की रमणीयता में इतने मुग्ध हो जाते हैं कि प्रेयसी का प्यार भी उन्हें तुच्छ लगता है। पन्त कहते हैं-

"छोड़ द्रुमों की मृदु छाया, तोड़ प्रकृति से भी माया,

बाले, तेरे बाल-जाल में, कैसे उलझा दूँ लोचन,

भूल अभी से इस जग को।"

इसी तरह संध्या की छटा निराला को सुन्दरी के रूप में आभासित होती है-

"दिवसावसान का समय

मेघमय आसमान से उतर रही है।

वह संध्या सुन्दरी परी-सी,

धीरे, धीरे, धीरे।"

'कामायानी' इस काल का उत्कृष्ट काव्य है जिसके आरम्भ में प्रकृति के भयानक रूप का वर्णन है, जिसमें जल-प्रलय के पश्चात् सर्वस्व नष्ट हो जाता है। संभवतः 'प्रसाद' का यह संकेत उद्दाम लालसाओं से ग्रसित उन लोगों के लिए भी है, जो प्रकृति के साथ

Edit with WPS Office

खिलवाड़ कर रहे हैं, परिणाम स्पष्ट है-

"हिमगिरि के उत्तुंग शिखर पर

बैठ शिला की शीतल छाँह।

एक पुरुष भीगे नयनों से,

देख रहा था प्रलय-प्रवाह।"

मनुष्य के प्रकृति के प्रति भोगवादी दृष्टिकोण ने जीवन को खतरे में डाल दिया है। परिणामतः अकाल, बाढ़, आदि प्राकृतिक त्रासदियों का हमें सामना करना पड़ता है। 'बंगाल का अकाल' इस प्राकृतिक विनाश का एक दुखान्तकारी घटनाक्रम है। नागार्जुन ने इस दृश्य का वर्णन इस प्रकार किया है-

"कई दिनों तक चूल्हा रोया, चक्की रही उदास ।

कई दिनों तक कानी कुतिया, सोई उनके पास।

कई दिनों तक लगी भीत पर, छिपकलियों की गश्त ।

कई दिनों तक चूहों की भी, हालत रही शिकस्त ।"

भोगवादी दृष्टि के साथ वैज्ञानिक प्रयोगों ने भी प्रकृति को नष्ट करने का कुत्सित प्रयास किया है। युद्धों की विभीषिका में जब परमाणु त्रासदी के बाद मनुष्य नहीं बच पाता है तो प्रकृति का क्या हाल होगा? अज्ञेय ने कहा कि 'मानव का रचा हुआ सूरज मानव को भाप बनकर सोख गया।' उसी पृष्ठभूमि में 'दिनकर' ने लिखा-

"बुद्धि के पवमान में उड़ता हुआ असहाय

जा रहा तू किस दिशा की ओर को निरुपाय?

लक्ष्य क्या? उद्देश्य क्या? क्या अर्थ ?

यह नहीं ज्ञात, तो विज्ञान का श्रम व्यर्थ।"

अभी मानवता उससे उबर ही नहीं पायी कि पूरे विश्व में आर्थिक उदारीकरण के नाम पर बाजार का विकास हुआ। भूमण्डलीकरण के दौर में बाजारवाद की त्रासदी का सबसे पहला शिकार बना पर्यावरण। परिणाम स्वच्छ वायु, स्वच्छ जल, शुद्ध फल, शुद्ध भोजन का भी अभाव उत्पन्न हो गया है। इक्कीसवीं सदी का आरम्भ पर्यावरण के संकट के साथ उदित होता है। ऐसी परिस्थिति में रचनाकार सजग हो उठता है।

'पानी की प्रार्थना' में केदारनाथ सिंह ने भीषण संकट की ओर आगाह कि्या है -

"अब देखिये न, लम्बे समय के बाद/कल

मेरे तट पर एक चील आयी/प्रभु,

कितनी कम चीलें दिखती हैं आज कल ।

आपको तो पता होगा कहाँ गयीं वे ?/

Edit with WPS Office

पर जैसे भी हो एक वह आयी/जाने

कहाँ से भटककर और बैठ गयी मेरे बाजू में/

उसने चौंककर पहले इधर-उधर देखा।

फिर अपनी लम्बी चोंच गड़ा दी मेरे सीने में।

अन्त में प्रभु अन्तिम/लेकिन सबसे जरूरी बात,

वहाँ होंगे मेरे भाई बन्धु/मंगल ग्रह या चाँद पर/

पर यहाँ पृथ्वी पर मैं यानी आपका मुँह लगा यह पानी

अब दुर्लभ होने के कगार तक पहुँच चुका हूँ।"

अन्त में यह स्पष्ट करना जरूरी है कि भारतीय साहित्य में जहाँ प्रकृति के प्रत्येक उपादान वृक्ष, नदी, फल, फूल, अनाज आदि को पूजनीय स्थलों का अधिकारी बनाया, वहीं आज का यह पदार्थवादी इनसान अपने जीवन-रस को ही लूटने चला है। ऐसी स्थिति में साहित्य-जगत को मौन रहकर तमाशा देखने के बजाय अपनी रचनाधर्मिता से मानवता को बचाने का सार्थक प्रयास करना चाहिए, क्योंकि प्रकृति से अलगाव मनुष्य के स्वार्थी होने की निशानी है-

"खेतों की मेड़ों की ओस नमी मिट्टी,

जितनी देर मेरे इन पाँवों में लगी रही,

उतनी देर जैसे मेरे सब अपने रहे,

उतनी देर सारी दुनिया सगी रही,

किन्तु मैंने ज्यों ही मौजे-जूते पहन लिये

जेब के पर्स का खयाल आने लगा।"

पारिस्थितिकी दर्शन

पाश्चात्य साहित्य में बीसवीं शताब्दी के अन्त में पारिस्थितिक विमर्श अथवा इको-क्रिटीसिज्म की शुरुआत हुई। विलियम रिक्रूट जैसे विद्वानों के नेतृत्व में यह प्रारम्भ हुआ था। भारत में सामान्य लोगों के मन में पर्यावरण सम्बन्धी सजगता आने के प्रमुख कारण थे चिपको आन्दोलन, साइलेंट वैली आन्दोलन, भोपाल गैस ट्रेजडी आदि। भारतीय साहित्य ने मनुष्य द्वारा होने वाले प्राकृतिक विनाशों को रोकना अपना फर्ज समझा और इस सिलसिले में हिन्दी के सृजनात्मक साहित्य में भूमि को आसन्न मृत्यु से बचने की आवश्यकता पर जोर दिया जाने लगा। गाँधी जी ने कहा था, 'प्रकृति हमारी आवश्यकताओं के लिए पर्याप्त है पर हमारे लालच के लिए नहीं।' रवीन्द्रनाथ टैगोर का नाटक 'मुक्तधारा' नदी पर बाँध बनाने के खिलाफ लिखा हुआ है। हिन्दी के कई नामी साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं में पर्यावरण संकट के मुद्दों को खूब उभारा है और वह सिलसिला आज भी जारी है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने अपनी रचनाओं द्वारा औद्योगिकीकरण के फलस्वरूप प्रकृति पर होने वाले अत्याचार और उससे उत्पन्न सांस्कृतिक एवं पर्यावरण संकट की ओर इशारा किया है। शुक्ल जी की साहित्य सम्बन्धी मान्यताओं में सबसे प्रमुख है साहित्य में प्रकृति और मनुष्य की पारस्परिकता ।

हिन्दी गद्य में पर्यावरण

Edit with WPS Office

हिन्दी गद्य की साहित्यिक रचनाओं में पर्यावरण विषयों को बहुत समय से स्थान मिलता आ रहा है। प्रेमचन्द ने अपने उपन्यास 'रंगभूमि' में वर्षों पहले ही पारिस्थितिकी का खुला चित्रण किया था। भारत का प्रथम पारिस्थितिक उपन्यास का दर्जा भी 'रंगभूमि' को देना ही उचित है।

1950 के बाद हिन्दी साहित्य में आंचलिक उपन्यासों की जो परम्परा चली, वह जल्दी ही जोर पकड़ा जिनमें ग्रामांचल के लोकसंस्कृति, जनजीवन, भाषा, रहन-सहन तथा उन्मुक्त परिवेश का चित्रण होता था। आंचलिक कथा-साहित्य में सम्पूर्ण अंचल अपनी स्वतंत्र चेतना के साथ मुखरित होता है। आंचलिक उपन्यासों की शुरुआत फणीश्वर नाथ रेणू के 'मैला आँचल' से हुई। लेकिन इन रचनाओं के केन्द्र में पर्यावरण शोषण से ज्यादा प्रत्येक अंचल के जनजीवन सन्बन्धी समस्याएँ ही प्रमुख रहीं।

पर आधुनिक उपन्यास व कथा-साहित्य में साहित्यकार पर्यावरण संकट के विविध आयामों को चित्रित करते नजर आते हैं। लगता है समकालीन साहित्य पूर्ण रूप से जाग्रत हो चुका है। देश व दुनिया में आये पर्यावरण के नकारात्मक बदलावों से वर्तमान लेखक चिन्तित होने लगा है। प्रकृति ने मनुष्य को जो उपहार दिये उन्हें मुफ्त का माल समझकर प्रकृति पर बेरहमी से पेश आने वाले मनुष्य का खुला चित्रण वर्तमान रचनाओं की खासियत है। कुछ रचनाओं पर नजर डालें।

उत्तर प्रदेश में बनने वाले टिहरी डैम प्रोजेक्ट को आधार बनाकर लिखा गया उपन्यास है वीरेन्द्र जैन का 'डूब', जिसमें बाँधों के निर्माण के कारण तहस-नहस होने वाले गाँव का चित्रण है। मानव और प्रकृति के पारस्परिक जुड़ाव तथा जलचक्र की महिमा बताने वाला उपन्यास है राजू शर्मा का 'हलफनामे'। जीवन का परम स्रोत जल की गाथा कहने वाला उपन्यास है नासिरा शर्मा का 'कुइयाजान'। इसमें पानी के संकट को दूर करने के लिए नदियों को जोड़ने के उपाय पर बल दिया गया है। संजीव के 'धार' और 'सावधान नीचे आग है' उपन्यासों में वायु एवं जल प्रदूषण की विभीषिकाओं का वर्णन है। तेजाब की फैक्टरी से निकलने वाली जहरीली हवा लग जाने से जंगल कैसे मुरझा जाते हैं, उसका जीवन्त चित्रण प्रस्तुत रचनाओं में है। संजीव के तकरीबन सभी उपन्यासों में किसी-न-किसी प्रकार के पर्यावरण प्रदूषण की ओर संकेत किया गया है। 'जंगल जहाँ शुरू होता है' उपन्यास में जंगल व वहाँ की जनजाति की सुरक्षा की ओर संकेत है। 'मृदुला गर्ग' का उपन्यास 'कठगुलाब' में भूमि की बंजरता की ओर संकेत है। कठगुलाब बंजरता का प्रतीक है। इसमें स्त्री और प्रकृति को परस्पर पूरक के रूप दर्शाया गया है। इस उपन्यास को इको-फेमिनिज्म के अन्दर रख सकते हैं। मैत्रेयी पुष्पा का उपन्यास 'इदन्नमम' में शहरीकरण से गाँव में होने वाली प्रतिक्रियाओं का चित्रण है। उपन्यास की नायिका मन्दा प्रकृति के दोहन-शोषण के खिलाफ आवाज उठाती है। वन्य जीवियों के संरक्षण का सन्देश देने वाला उपन्यास है कमलेश्वर द्वारा लिखा गया 'अनबीता व्यतीत ' ।

राजेश जोशी द्वारा लिखी गयी कहानी 'कपिल का पेड़' में मानव और प्रकृति के पारस्परिक सम्बन्ध पर बल दिया गया है। कहानी में पेड़ को प्रेम के प्रतीक के रूप में दर्शाया गया है। कपिल के अनुसार पेड़ और लड़की एक सामान है, इसलिए दोनों को सुरक्षित रखना आवश्यक है। स्वयं प्रकाश की कहानी 'कहाँ जाओगे बाबा' में गाँव में हो रहे आधुनिकीकरण और बाजारीकरण का वर्णन है। आज हम प्रकृति और प्राकृतिक जीव-जन्तुओं से दूर होते जा रहे हैं। इसका मार्मिक चित्रण चित्रा मुद्गल की कहानियाँ 'जिनावर' और 'जंगल' में देखा जा सकता है। पशु-पक्षियों के प्रति प्रकट होने वाली संवेदनात्मक मानसिकता इन कहानियों की खासियत है। मूदुला गर्ग की कहानी 'विनाशदूत' 1984 में हुई भोपाल गैस दुर्घटना पर आधारित है। इस भयानक हादसे का जिक्र मेघ और कवि के वार्तालाप के जरिये कहानी में प्रस्तुत किया गया है। मृदुला गर्ग का 'इक्कीसवीं सदी का पेड़' भी पर्यावरण प्रदूषण की विभीषिका दर्शाने वाली सशक्त कहानी है।

आज भूमण्डलीकरण के इस समय में मनुष्य काफी संवेदन-शून्य होते जा रहे हैं। प्रकृति पर मनुष्य के अत्याचार का प्रमुख कारण यही संवेदन-शून्य की मनोवृत्ति ही है। आज की बाजारी संस्कृति कमजोर व्यक्तियों को जन्म दे रही है। ऐसी हालत में साहित्यिक रचनाएँ ही एक जरिया हैं जिसके द्वारा मनुष्य के मन में प्रकृति के प्रति प्रेम जगा सकते हैं। शुक्र है, वर्तमान साहित्यकार उसके लिए प्रयत्नरत हैं।

इको-फेमिनिज्म अथवा पारिस्थितिक स्त्रीवाद

इको-फेमिनिज्म में इको अथवा इकॉलोजी शब्द पृथ्वीरूपी गृह का प्रतिपादन करता है तो उस पृथ्वी पर होने वाले शोषण

Edit with WPS Office

का वर्णन फेमिनिज्म या नारीवाद के अन्तर्गत तलाशने की चेष्टा की गयी है। प्राकृतिक संसाधनों का दोहन और स्त्री की गुलामी को सम्बद्ध करके देखने की प्रवृत्ति इसमें पायी जाती है।

इको-फेमिनिज्म अथवा पारिस्थितिक स्त्रीवाद में प्रकृति और स्त्री के ऊपर पुरुष के अधिकार की आलोचना की जाती है। यह एक वैश्विक विचारधारा है जिसमें स्त्री और प्रकृति को केंद्र में रखकर विचार-विमर्श किया जाता है। आज स्त्री और प्रकृति दोनों शोषण का शिकार बनी हुई हैं, दोनों की तुलना इसमें होती है।

आधुनिक नारीवादियों में सबसे पहले सीमोन द बुआ ने स्त्री और प्रकृति को साथ रखकर अपना विचार प्रस्तुत किया था। पुरुष-सत्तात्मक समाज ने स्त्री और प्रकृति को अपने अधीन रखकर नयी संस्कृतियों का निर्माण करना शुरू किया था। स्त्री और प्रकृति से भी बढ़कर श्रेष्ठ की सृष्टि करने की व्यग्रता में पुरुष प्रकृति को खाकर औद्योगिक संस्कृति के निर्माण में लग जाता है। विकास के इस पागलपन में पुरुष स्त्री और प्रकृति से दूर जाने लगा। अपनी किताब सेकण्ड सेक्स में सीमोन द बुआ स्त्री और प्रकृति के पारस्परिक सम्बन्ध के ये विचार प्रस्तुत करती है। इसका मतलब है कि सीमोन द बुआ के चिन्तन में पारिस्थितिक स्त्रीवाद नामक दर्शन का बीजरूप विद्यमान है।

दो विश्वयुद्धों की विनाशलीला से दुनिया भर के लोग संत्रस्त थे। इसके बाद अमेरिका में कृषि-क्षेत्र में पैदावार बढ़ाने के लिए कीटनाशकों का प्रयोग होने लगा। इन कीटनाशकों से अनेक कीटों के साथ-साथ पक्षी भी मृतप्राय हो गये। जब वसन्त आया तो पक्षियों का कल-कलरव सुनाई नहीं पड़ा। अमेरिका के रेचेल कार्सन ने उस मौन वसन्त का वर्णन करते हुए 1962 में silent spring (मौन वसन्त) लिखा।

इको-फेमिनिज्म नामक संकल्पना की दार्शनिक व्याख्या सबसे पहले फ्रेंच फेमिनिस्ट फ्रांस्वा द यूबोन ने प्रस्तुत की। उनके भी पहले शुल्मिथ फररस्टेन ने स्त्रीवाद में निहित पारिस्थितिकी पर विचार किया था। फिर भी इस नये दर्शन को देने का श्रेय फ्रांस्वा द यूबोन को जाता है। फ्रांस्वा द यूबोन के अनुसार भूमि के नाश का दायित्व पुरुषों पर है। हजारों वर्ष पहले यहाँ खेती स्त्रियों के नियन्त्रण में थी। पुरुष ने अपनी शक्ति से इसे अपने अधीन कर लिया। मिट्टी और स्त्री में बीज बोने का अधिकार पुरुष ने ले लिया। इस तरह कहा जा सकता है कि आज का पारिस्थितिक संकट पुरुष लिंगाधिपत्य की देन है।

इको-फेमिनिज्म का उद्देश्य पुरुष के स्थान पर स्त्री को प्रतिष्ठित करना नहीं बल्कि पुरुष-स्त्रीभेद के बिना सभी मनुष्य को समान अधिकार देना और सबके मन में लिंगभेद से परे एक दृष्टिकोण पैदा करना है। ऐसे समाज में ही प्रकृति सुरक्षित रह सकती है। अदूरदर्शिता से तैयार किये गये योजनाओं का दुष्परिणाम प्रकृति को भोगना पड़ रहा है जो मानव जाति के अस्तित्व के लिए आज खतरा सिद्ध हो चुका है। इससे बचने के लिए प्रकृति से मिलकर जीने की एक जीवन-शैली अपनानी है। इसके लिए पुरुष और स्त्री को कन्धे से कन्धा मिलकर काम करना है। तभी स्वस्थ पर्यावरण से युक्त एक समाज की सृष्टि होगी।

भारत में पारिस्थितिक स्त्रीवाद

भारतीय परम्परा के अनुसार भूमि माता के सामान है और हम सब उसकी सन्तानें हैं। प्रकृति को स्त्री के रूप में देखने की परम्परा यहाँ पहले से मौजूद थी। इसलिए यहाँ स्त्री और प्रकृति दोनों की पूजा की जाती थी। लेकिन आधुनिकता और औद्योगिकता के प्रभाव से यहाँ भी प्रकृति का दोहन व्यापक रूप से होने लगा।

चिपको आन्दोलन

26 मार्च, 1974 को पेड़ों की कटाई रोकने के लिए 'चिपको आन्दोलन' शुरू हुआ। उस साल जब उत्तराखण्ड के रैंणी गाँव के जंगल के लगभग ढाई हजार पेड़ों को काटने की नीलामी हुई, तो गौरा देवी नामक महिला ने अन्य महिलाओं के साथ इस नीलामी का विरोध किया। इसके बावजूद सरकार और ठेकेदार के निर्णय में बदलाव नहीं आया। जब ठेकेदार के आदमी पेड़ काटने पहुँचे तो गौरा देवी और उनके 21 साथियों ने उन लोगों को समझाने की कोशिश की। जब उन्होंने पेड़ काटने की जिद की तो महिलाओं ने पेड़ों से चिपककर उन्हें ललकारा कि पहले हमें काटो, फिर इन पेड़ों को भी काट लेना। अन्ततः ठेकेदार को जाना पड़ा। बाद में स्थानीय वन विभाग के अधिकारियों के सामने इन महिलाओं ने अपनी बात रखी। फलस्वरूप रैंणी गाँव का जंगल नहीं काटा गया। इस प्रकार यहीं से 'चिपको आन्दोलन' की शुरुआत हुई। चिपको आन्दोलन एक घटना मात्र नहीं है, यह


Edit with WPS Office

पर्यावरण व प्रकृति की रक्षा के लिए सतत चलने वाली एक प्रक्रिया है। इस आन्दोलन को शिखर तक पहुँचाने का काम प्रमुख पर्यावरणविद सुन्दरलाल बहुगुणा ने किया था।

भारत में कई स्त्रियाँ पर्यावरण को बचाने के आन्दोलन में सक्रिय भाग ले रही हैं। मेधा पाटकर जी का नर्मदा बचाओ आन्दोलन, केरल के पालक्काड जिले के प्लाचीमडा में स्थापित कोकाकोला की बहुराष्ट्रीय कम्पनी के विरुद्ध मयिलम्मा द्वारा चलने वाला आन्दोलन आदि यहाँ उल्लेखनीय है।

पृथ्वी ही एकमात्र ऐसा गृह है जिस पर जीवन सम्भव है। यहाँ के प्राणियों को एक सुन्दर एवं स्वस्थ जीवन उपलब्ध कराने के लिए पृथ्वी को नष्ट होने से बचाना बहुत आवश्यक है। इसलिए सब मिलकर स्वच्छ व स्वस्थ पर्यावरण से युक्त एक समाज की सृष्टि करें।

हमारे जीवन में वनों का महत्त्व

—कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी

वृक्षों की नीली छटा के लिए हमारे पूर्वजों में जो प्रेम था वह हममें भी होना चाहिए। हमें अपनी वन-प्रधान संस्कृति की ओर अभिमुख होना चाहिए। वनों की छाया में जन्म लिया, वृक्षों के पत्तों पर प्रभात-कालीन जल-कण का जलपान किया। समीर में डोलती हुई पत्रावलियों में से आती हुई चन्द्रकिरण के साथ नृत्य कला के प्रथम पाठ पढ़े। इस संस्कृति के मौलिक सिद्धान्तों को अर्वाचीन जीवन में हम ला सकते हैं। हर एक युग में अपनी संस्कृति की प्रेरणा से हमने अपने संस्कारों की मूलभूत भावनाओं को सुदृढ़ बनाया है। इतना ही नहीं विभिन्न युगों में जो विषमता उपस्थित हुई, भारतवासियों ने उन्हें मेटने के लिए इन मूल्यों को शक्ति और व्यापकता प्रदान की।

एक समय ऐसा भी था, जब हमारी संस्कृति सर्वांग जीवन को समरस बनाती थी। आर्थिक जीवन पर भी उसका प्रभाव पड़ता था। लेकिन आज हमने इन प्रश्नों को एक-दूसरे से बिलकुल पृथक कर दिया है। सच तो यह है कि समस्त जीवन एक है, अभेद्य है। इस सत्य को देखने की कला हमारे हाथों से निकल गयी है। लेकिन मुझे तो स्पष्ट दिखाई देता है कि जब तक समस्त जीवन को एक रूप में देखने की कला हम फिर से नहीं सीखेंगे, तब तक हममें न राष्ट्रीय आत्मविश्वास आयेगा और न इस भयंकर परिस्थिति से पार उतरने की शक्ति आयेगी।

आज तो बहुत बड़ा प्रश्न हमारे सामने है, उसको लीजिए। भारत में कभी भी अन्न की कमी नहीं थी, भूतकाल में भारत धान्य और धन से समृद्ध था। आज न्यूनता हमारे सामने ताण्डव कर रही है। जो माता अभी तक सुजला, सुफला, शस्यश्यामला थी, वह क्षीण हो गयी है। अपनी सन्तान को भी वह खिला नहीं सकती, क्योंकि जो हमारी सांस्कृतिक प्रणाली है; उसको नवीन दृष्टि से देखने की शक्ति हममें नहीं रही। किन्तु यह बात निश्चय समझिए कि इस शक्ति के बिना हम अर्वाचीन जीवन में टिक नहीं सकते।

"वृक्ष ही जल है, जल ही रोटी है और रोटी ही जीवन है।" यह नग्न सत्य है। आज सभी भारतीय हृदयों में असन्तोष भरा है, क्योंकि हमारे पास खाने को अन्न नहीं है। हमारे पास अन्न नहीं है, क्योंकि पानी संग्रह करने की पुरानी पद्धति हम हस्तगत नहीं कर सके। हमारे पास पानी नहीं है, वर्षा अनिश्चित है, क्योंकि हम तरु-महिमा भूल गये हैं। हजारों वर्षों तक हम जीवित रहे, लेकिन हमारी दृष्टि संकुचित हो गयी। हम नये-से बन गये। तरु-महिमा की हमको परवाह नहीं रही। वृक्षों को हम काटने लगे। वृक्षारोपण आज एक फैशन बन गया है, परन्तु उसमें जो धार्मिक श्रद्धा का तत्त्व था चला गया।

हमारी सारी संस्कृति वन-प्रधान है। ऋग्वेद, हमारी सनातन शक्ति का मूल है, वन-देवियों की अर्चना करता है। मनुस्मृति में वृक्ष विच्छेदक को बड़ा पापी माना गया है। उसके लिए दण्ड का विधान किया है। मत्स्यपुराण में कहा गया है—"जो आदमी वृक्षों को नष्ट करता है उसे दण्ड दिया जाये।" तालाबों, सड़कों या सीमा के पास के वृक्षों को काटना बड़ा गुरुतर अपराध था। उसके

Edit with WPS Office

लिए दण्ड भी बड़ा कड़ा रहता था। उसमें कहा गया है कि जो वृक्षारोपण करता है, वह तीस हजार पितरों का उद्धार करता है। अग्निपुराण भी वृक्ष-पूजा पर जोर देता है। वृक्षों का रोपण स्नेहपूर्वक और उनका परिपालन पुत्रवत् करना चाहिए।

पुत्र और तरु में भी भेद है; क्योंकि पुत्र को हम स्वार्थ के कारण जन्म देते हैं, परन्तु तरु-पुत्र को हम परमार्थ के लिए ही बनाते हैं। ऋषि-मुनियों की तरह हमें वृक्षों की पूजा करनी चाहिए; क्योंकि वृक्ष तो द्वेष-वर्जित हैं। जो छेदन करते हैं, उन्हें भी वृक्ष छाया, पुष्प और फल देते हैं। इसलिए जो विद्वान पुरुष हैं, उनको वृक्षों का रोपण करना चाहिए और उन्हें जल से सींचना चाहिए।

हम स्वर्ग की बात क्या करें? हम वृक्षारोपण करके यहाँ ही स्वर्ग क्यों न बनायें? समस्त इतिहास में हमें राजाओं द्वारा वृक्षारोपण कराये जाने के उदाहरण मिलते हैं। महान् सम्राट अशोक ने कहा है—"रास्ते पर मैंने वटवृक्ष रोप दिये हैं, जिनसे मानवों, पशुओं को छाया मिल सकती है। आम्र वृक्षों के समूह भी लगा दिये हैं।" आज प्रभुत्वसम्पन्न भारत ने इस महाराजर्षि के राज्य-चिह्न ले लिए हैं। तेईस सौ वर्ष पूर्व उन्होंने देश में जैसी एकता स्थापित की थी वैसी ही हमने भी प्राप्त कर ली है। क्या हम उनके इस सन्देश को नहीं सुनेंगे? हम इस सन्देश को सुनकर निश्चय ही ऐसा प्रबन्ध करेंगे, जिससे भारत के भावी प्रजाजन कह सकें कि हमने भी हर रास्ते पर वृक्ष लगाये थे, जो मानवों और पशुओं को छाया देते हैं।

हमारी संस्कृति में जो सुन्दरतम् और सर्वश्रेष्ठ है, उसका उद्भव सरस्वती के तट के वनों में हुआ। नैमिषारण्य के वन में शौनक मुनि ने हमको महाभारत की कथा सुनाई—महाभारत जो भारतीय आत्मशक्ति का स्रोत है। हमारे अनेक तपोवनों में ही ऋषि-मुनि वास करते थे, आजीवन अपने संस्कार, आत्मसंयम और भावनाओं को सुदृढ़ बनाते थे। हमारे जीवन का उल्लास वृन्दावन के साथ लिपटा हुआ है। वृन्दावन को हम कैसे भूल सकते हैं? वहीं कृष्ण भगवान् ने यमुना-तट पर नर्तन करते हुए डालियों और पुष्प के ताल के साथ अपनी वेणु बजायी, उसकी ध्वनि आज भी हमारे कानों में सुनाई देती है।

हमें पूर्वजों की ज्वलन्त संस्कृति मिली है, लेकिन हम उसके योग्य नहीं रहे। हम अपने वनों को काट डालते हैं, हम वृक्षों का आरोपण करना भूल गये। वृक्ष-पूजा का हमारे जीवन में स्थान नहीं रहा। हमारी स्त्रियों में से शकुन्तला की आत्मा चली गयी।

शकुन्तला वृक्षों को पानी दिये बिना आप पानी ग्रहण नहीं करती थी। आभूषणप्रिय होते हुए भी वह यह सोचकर पल्लवों को नहीं तोड़ती कि इससे वृक्षों को दुख होगा। पार्वती ने देवदारु को पुत्र के समान समझकर माँ के दूध के समान पानी पिलाकर बढ़ाया था।

मंजरित वृक्षों का सौन्दर्य हम नहीं भूल सकते। हम नहीं भूल सकते भव्य वृक्षों का अद्भुत गौरव और वृद्ध ऋषियों के समान जगत्-कल्याण में ही जीवन-साफल्य समझने वाले वनों को। यदि प्रत्येक पुरुष और स्त्री वृक्षों के महत्त्व को समझे और पुत्रवत् उनका परिपालन करे तो भारत का हर नगर, हर गाँव जीवनोल्लास से ओत-प्रोत हो जायेगा। यह सुगम और सीधा-सा तथ्य भी हम कैसे भूल सकते हैं?

प्राचीन भारत में वृक्षों का धार्मिक महत्त्व विशेष था। प्राचीन साहित्य में अरण्यों एवं वनों के प्रसंग बहुत आते हैं और मूर्तिकला तथा चित्रकला में तो वृक्षों और पुष्पों का विशेष स्थान रहा है।

सिन्धु-घाटी सभ्यता के अवशेषों से पता चलता है कि उस युग के लोगों को वृक्ष कितने प्रिय थे। उनके मिट्टी के बर्तनों पर पीपल के पत्तों के चित्र मिलते हैं। उनके राज्य-चिह्नों में से एक में झुकी हुई डाली वाला वृक्ष अंकित है और दूसरे में एक ऊँचे वृक्ष पर बैठा हुआ एक मनुष्य तथा उनके नीचे एक क्षुधातुर व्याघ्र अंकित मिलता है।

वनों, पर्वतों और नदियों, मेघों के गर्जन और बिजली की कड़क, भयानक प्रचण्ड वायु, प्रभात-सुषमा, शीतल झरनों औश्र वृक्षों का वर्णन हमारे साहित्य में आता है। वन-देवी की स्तुति में लिखी गयी ऋग्वेद की एक ऋचा में प्रकृति का एक शब्द-चित्र खींचा गया है। अश्वत्थ और न्यग्रोध की लकड़ी से बने हलों और रथों का प्राचीन ग्रन्थों में प्रायः वर्णन आया है।

रामायण और महाभारत के घटनास्थल बहुधा वनों में ही है। महाभारत में खाण्डव वन के जलने का उल्लेख और रामायण में पंचवटी वन की रमणीयता का वर्णन किया गया है। पुराणों में वृक्ष के माहात्म्य, वृक्षारोपण के पुण्य और वृक्ष काटने के पाप के

Edit with WPS Office

सम्बन्धों में बहुत कुछ कहा गया है।

अग्निपुराण में गृह निर्माता से कहा गया है—घर के उत्तर में पलाश, पूर्व में वट, दक्षिण में आम और पश्चिम में अश्वत्थ के वृक्ष लगाने चाहिए, दक्षिणावर्ती सीमा पर काँटेदार झाड़ी लगानी चाहिए। घर के पास फूलों का एक बगीचा लगाना चाहिए, जिसमें फलों के पौधे और शीशम के वृक्ष लगाये जायें।

इसी पुराण में वृक्षों की पूजा का माहात्म्य बताया गया है—"जो मनुष्य लोगों के हित के लिए वृक्ष लगाता है, वह मोक्षपद प्राप्त करता है। वृक्ष लगाने वाला मनुष्य अपने 30,000 भूत और भावी पितरों को मोक्ष दिलाने में सहायक होता है।" पुराण में कहा गया है—"दस कुएँ बनवाना, एक तालाब बनवाने के समान है। दस तालों का निर्माण एक झील के निर्माण के बराबर है। दस झील बनाना एक सुपुत्र प्राप्त करने के समान पुण्यकारक है, किन्तु दस सुपुत्रों का पुण्य केवल एक वृक्ष के लगाने से प्राप्त होता है।"

बुद्ध भगवान को वट-वृक्ष के नीचे ज्ञान प्राप्त हुआ था। बौद्ध कला और साहित्य में इसका निरन्तर उल्लेख आता है। सिकन्दर और यूनानियों ने भारत के विशाल वटवृक्षों को देखकर आश्चर्य किया था।

हमारी संस्कृति में जो सुन्दरतम और श्रेष्ठतम् है, उसका उद्भव आश्रमों और तपोवनों में हुआ था। हमारे संस्कारों पर नन्दन-वन के सौन्दर्य और सती सीता के कारण अशोक वन के करुणापूर्ण वातावरण की छाप लगी हुई है। वृन्दावन को भी हम कैसे भूल सकते हैं, जहाँ कृष्ण भगवान ने अपना सन्देश हमें सुनाया था।

प्रश्न :

प्रश्न 1: पर्यावरण की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए विभिन्न विद्वानों एवं स्रोतों द्वारा दी गई इसकी प्रमुख परिभाषाओं का विस्तृत विश्लेषण कीजिए।

प्रश्न 2: पर्यावरण के बहुआयामी महत्त्व की विवेचना कीजिए। आध्यात्मिक, सामाजिक, आर्थिक एवं आधुनिक संदर्भ में पर्यावरण किस प्रकार मानव जीवन को प्रभावित करता है?

प्रश्न 3: पर्यावरण शिक्षा से आप क्या समझते हैं? मानवीय सोच में बदलाव लाने तथा राष्ट्रीय एवं अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर पर्यावरण शिक्षा के उद्देश्यों व प्रयासों की विस्तार से व्याख्या कीजिए।

प्रश्न 4: वायु प्रदूषण के प्राकृतिक और मानव-जनित स्रोतों का तुलनात्मक विश्लेषण करते हुए बताइए कि इसका मानव स्वास्थ्य, वनस्पतियों और वायुमण्डल पर क्या प्रभाव पड़ता है? इसे नियंत्रित करने के कानूनी प्रावधानों की समीक्षा कीजिए।

प्रश्न 5: जल प्रदूषण की विभिन्न विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषाओं को स्पष्ट कीजिए तथा इसके प्रमुख स्रोतों का विस्तृत वर्णन कीजिए। मानव समाज और जलीय जीवन पर इसके दुष्प्रभावों को रेखांकित करते हुए रोकथाम के व्यावहारिक उपाय समझाइए।

प्रश्न 6: मृदा प्रदूषण क्या है? घरेलू, नगरपालिका एवं कृषि-संबंधी अपशिष्ट मृदा की गुणवत्ता को किस प्रकार क्षति पहुँचाते हैं? मानव जीवन और कृषि पर इसके प्रभावों का उल्लेख करते हुए इसके प्रबंधन के सुझाव दीजिए।

प्रश्न 7: रेडियोधर्मी प्रदूषण से आप क्या समझते हैं? विभिन्न प्रकार की विकिरणों (α, β, γ एवं X-किरणें) के प्रभाव तथा परमाणु अवनुपात (Nuclear Fallout) के विभिन्न स्तरों का मानव स्वास्थ्य एवं खाद्य पदार्थों पर पड़ने वाले प्रभावों सहित विस्तार से वर्णन कीजिए।

प्रश्न 8: समुद्री प्रदूषण के प्रमुख कारणों (विशेषकर औद्योगिक अपशिष्ट और तेल रिसाव) पर प्रकाश डालते हुए स्पष्ट कीजिए कि यह समुद्री पारिस्थितिकी, जैव-विविधता और मानव स्वास्थ्य को कैसे संकट में डालता है? इसे रोकने के लिए कौन-से प्रभावी उपाय अपनाए जाने चाहिए?

Edit with WPS Office

प्रश्न 9: "भारतीय साहित्य में प्रकृति-चित्रण केवल सौंदर्य तक सीमित न रहकर पर्यावरण चेतना एवं संकटों का जीवंत दस्तावेज रहा है।" वैदिक काल से लेकर आधुनिक काल (काव्य एवं गद्य) तक के संदर्भ में विभिन्न रचनाओं एवं उदाहरणों के आधार पर इस कथन की सविस्तार समीक्षा कीजिए।

प्रश्न 10: पारिस्थितिक स्त्रीवाद (इको-फेमिनिज्म) की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए यह समझाइए कि पुरुष-सत्तात्मक व्यवस्था ने स्त्री और प्रकृति के शोषण को किस प्रकार परस्पर संबद्ध किया है? भारतीय संदर्भ में चिपको आंदोलन और प्रमुख महिला पर्यावरणविदों की भूमिका का विस्तृत उल्लेख करते हुए इसका विश्लेषण कीजिए।

प्रश्न 11: "भारतीय संस्कृति मूलतः वन-प्रधान संस्कृति रही है।" इस कथन के आलोक में पाठ के आधार पर स्पष्ट कीजिए कि प्राचीन ग्रंथों, ऐतिहासिक साक्ष्यों एवं सांस्कृतिक प्रतीकों में वृक्षों और वनों को क्या स्थान तथा सम्मान दिया गया है ?

प्रश्न 12: "वृक्ष ही जल है, जल ही रोटी है और रोटी ही जीवन है।" लेखक के इस कथन का निहितार्थ स्पष्ट करते हुए विवेचना कीजिए कि आधुनिक समाज में वनों के प्रति दृष्टिकोण में क्या बदलाव आया है और इस विकट परिस्थिति से उबरने के लिए क्या उपाय आवश्यक हैं?

Edit with WPS Office

दयानंद कला महाविद्यालय, लातूर

हिंदी विभाग

बी. ए. द्वितीय वर्ष

सत्र : तृतीय (मायनर)

पेपर का नाम : "हिंदी साहित्य और पर्यावरणीय चेतना" : HHINM -1201

डॉ. मीना घुमे

Swami Ramanand Teerth Marathwada University, Nanded
Faculty of Humanities- Hindi

Under Graduate Second Year Programme, Semester III

HHINM-1201-4Cr-हिंदी साहित्य और पर्यावरणीय चेतना *(Minor)* Curriculum Details

Module No.	Unit No.	Name of Topic	Hrs. Required tocover the contents 1 Hrs.=60 M.
1.0		पर्यावरण	15
	1.1	पर्यावरण - परिभाषा और महत्व	
	1.2	पर्यावरण और प्रदूषण	
	1.3	पर्यावरण और साहित्य	
	1.4	लेख-हमारे जीवन में वनों का महत्व- कन्हैयालाल मुंशी	
2.0		कहानियाँ	15
	2.1	2.1.1 इक्कीसवीं सदी का पेड़- मृदुला गर्ग 2.1.2 विनाशदूत - मृदुला गर्ग	
	2.2	जंगलजातकम् - काशीनाथ सिंह	
	2.3	कहीं दूर जब दिन ढल जाये - बटरोही	
	2.4	2.4.1 जंगल पर विकास -हरिराम मीणा 2.4.2 नदी गायब है -एस. आर.हरनोट	
3.0		कविताएँ- भाग-1	15
	3.1	3.1.1 धरती - नागार्जुन , 3.1.2 बादल क्या है - राजेश जोशी	
	3.2	पानी की प्रार्थना - केदारनाथ सिंह	
	3.3	उस दिन का जंगल- नीलाधर जगूड़ी	
	3.4	3.4.1 गंगा को प्यार- अक्षय कमल 3.4.2 इक्कीसवीं शताब्दी की ओर - अक्षय कमल	
4.0		कविताएँ भाग-2	15
	4.1	4.1.1 भारत की ऋतुएँ - साईंमीरा जोशी, 4.1.2 बेटी-पेमरंजम अनिमेष	
	4.2	4.2.1 एक वृक्ष की हत्या - कुँवरनारायण, 4.2.2 गंगास्नान - ज्ञानेंद्रपति	
	4.3	नदी, पहाड और बाजार - अनिता केरकेट्टा	
	4.4	पुरोऽहंपृथिव्या- डॉ.हूबनाथ पाण्डेय	
		Total	60

3.0 भाग 1, 4.0 भाग 2 : खण्ड ग - कविताएं

1. **'धरती' - नागार्जुन**

कवि-परिचय :

Edit with WPS Office

नागार्जुन का वास्तविक नाम वैद्यनाथ मिश्र है। वे शुरुआती दिनों में 'यात्री' उपनाम से भी रचनाएँ लिखते रहे हैं। नागार्जुन एक कवि होने के साथ-साथ उपन्यासकार और मैथिली के श्रेष्ठ कवियों में गिने जाते हैं। ये वामपन्थी विचारधारा के एक महान कवि हैं। इनकी कविताओं में भारतीय जन-जीवन की विभिन्न छवियाँ अपना रूप लेकर प्रकट हुई हैं। कविता की विषय-वस्तु के रूप में इन्होंने प्रकृति और भारतीय किसानों के जीवन को, उनकी विभिन्न समस्याओं को, शोषण की अटूट परम्परा को और भारतीय जनता की संघर्ष-शक्ति को अत्यन्त सशक्त ढंग से इस्तेमाल किया है। नागार्जुन वास्तव में भारतीय वर्ग-संघर्ष के कवि हैं। नागार्जुन एक घुमन्तू व्यक्ति थे। वे कहीं भी टिककर नहीं रहते और अपने काव्य-पाठ और तेज-तर्रार बातचीत से अनायास ही एक आकर्षक सांस्कृतिक वातावरण का निर्माण कर देते थे। आपातकाल के दौरान नागार्जुन ने जेलयात्रा भी की थी।

जन्म : 1911 में ज्येष्ठ पूर्णिमा के दिन ग्राम तरौनी, जिला दरभंगा में। परम्परागत प्राचीन पद्धति से संस्कृत की शिक्षा। सुविख्यात प्रगतिशील कवि एवं कथाकार। हिन्दी, मैथिली, संस्कृत और बांग्ला में काव्य-रचना। मातृभाषा मैथिली में 'यात्री' नाम से लेखन। मैथिली काव्य संग्रह 'पत्रहीन नग्न गाछ' के लिए साहित्य अकादेमी पुरस्कार से सम्मानित।

रचनाएँ : छह से अधिक उपन्यास, एक दर्जन कविता संग्रह, दो खण्ड काव्य, दो मैथिली; (हिन्दी में भी अनूदित) कविता संग्रह, एक मैथिली उपन्यास, एक संस्कृत काव्य 'धर्मलोक शतकम्' तथा संस्कृत से कुछ अनूदित कृतियों के रचयिता।

मुख्य कविता-संग्रह : 'सतरंगे पंखों वाली', 'हजार-हजार बाँहों वाली' इत्यादि। उनकी चुनी हुई रचनाएँ दो भागों में प्रकाशित हुई हैं।

निधन : 5 नवम्बर 1998।

कविता-सार :

साहित्य सृजन में परिवेश का अपना विशेष महत्त्व है। साहित्य में परिवेश का आधार परम्परा और मौलिकता है। परिवेश की मौलिकता रचयिता पर आधारित है, रचना से इसका जुड़ाव है। यह स्पष्ट है कि परिवेश से अप्रभावित और अप्रेरित सृजन कर्म असम्भव है। साहित्यकार या लेखक जिस परिवेश में रहता है, जो कुछ अनुभव करता है, इन सबको अपने शब्दों में प्रस्तुत करता है। साहित्यकार समय का प्रतिनिधि है, तो उसकी आवाज आम आदमी की आवाज से शक्तिशाली बनती है।

परिवेश देशकाल से सम्बन्धित है। परिवेश के अन्तर्गत भौगोलिक पर्यावरण है, जो प्राकृतिक शक्तियों और वस्तुओं से सम्बन्धित है। यह मनुष्य के नियन्त्रण से परे है। वायु, पहाड़, नदियाँ, पेड़-पौधे, जीव-जन्तु, वर्षा आदि सभी प्रकृति प्रदत्त वस्तुएँ भौगोलिक पर्यावरण में हैं। मानव-जीवन के मूल्य, सभ्यता और साहित्य सभी प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से परिवेश से प्रभावित हैं। इस प्रकार परिवेश मानव कुल के अस्तित्व का पर्याय बन जाता है। यद्यपि प्रकृति के सभी जीव-जन्तु प्रकृति के नियमों के अनुसार चलते हैं, तो भी मनुष्य प्रकृति के समानान्तर चलता है और उसके अनुकूल नियम बनाता है। यह प्रकृति को अपनी इच्छा के अनुसार बदल डालता है। यों भूमण्डलीकरण के इस युग में प्रकृति और परिवेश मनुष्य के द्वारा तीव्र शोषण का शिकार बन जाते हैं।

उत्तराधुनिक ज़रूरतों की पूर्ति के नाम पर अमेरिका धर्म-नवीकरण, बेसहारों की सहायता, साम्राज्यवाद आदि अनेक कर्म-काण्ड चलाता है, जिसके द्वारा यह संसार भर के छोटे-मोटे विकासशील राष्ट्रों पर अपना अधिकार जमाने की कोशिश करता रहता है। लेकिन खेद की बात यह है कि इस आधिपत्य का मुकाबला करने में दूसरे राष्ट्रों के नीतिबोध सक्षम नहीं हैं। इससे उत्पन्न मशीनी सभ्यता और बाजारीकरण प्रकृति का शोषण बढ़ाता है। इसलिए आधुनिक युग में पर्यावरण का प्रदूषण अधिक हो गया है। मानव के अपने इतिहास से पनपकर-पली हुई परिस्थिति और परिस्थिति-दर्शन आज तिरस्कृत होने लगे हैं। इस सन्दर्भ में विश्व मानव का परिस्थितिबोध जाग उठता है। फलस्वरूप पर्यावरण से जुड़ी समस्याएँ विश्व भर के सम्मेलनों में उभरने लगीं। साहित्य के क्षेत्र में भी इसकी झलक दिखाई पड़ी है। हिन्दी कविता के क्षेत्र में यह विचार अपनी पूरी गरिमा के साथ दिखाई देता है।

कविता जीवन की भावना सम्पूर्ण पुनः सृजन है और सूक्ष्म विश्लेषण भी। कविता की जान प्रकृति है। प्रकृति से मानव का

Edit with WPS Office

मेलजोल अनिवार्य है। इस दृष्टिकोण से उत्पन्न परिस्थितिबोध कविता का विषय बनना सहज है। नयी काव्य-धारा के कवि नागार्जुन की कविता 'धरती' की प्रासंगिकता यहाँ विशेष उल्लेखनीय है। 'धरती' कविता में नागार्जुन प्रकृति और मनुष्य के अटूट सम्बन्ध के बारे में एक अलग दृष्टिकोण से अपनी राय प्रकट करते हैं।

हमारी प्राचीन सभ्यता वसुन्धरा को माता की संज्ञा देती है। दोहन और पोषण हमारी संस्कृति का मूल आधार रहे। लेकिन आज हम दोहन मात्र करते हैं— 'दोहन और पोषण' का भाव लुप्त हो गया है। हम मानव भौतिकवादी बन गये हैं। यह जिन्दगी समय से अधिक तेज भागती है। आविष्कार के क्षेत्र में मानव कल्याण का साधन मात्र नहीं बने हैं, मनुष्य-जाति के सर्वनाश का भी कारण बन सकते हैं। हम प्रगति की अन्धी दौड़ में वसुन्धरा को भूलते हैं। इस भाव को कवि यों आत्मसात् करते हैं—

धरती धरती है

पन्हाई हुई गाय नहीं

कि चट से दुह लो कंटिया भर दूध

...

नहीं है वह ऑटोमोबाइल

कि स्विच दबाकर ड्राइव करोगे

छोड़ दोगे ले जाकर पटना या दिल्ली—

कवि ने ऑटोमोबाइल शब्द के द्वारा भौतिकता की अभिव्यक्ति की है। आज के व्यस्त मनुष्य की भाग-दौड़, कृत्रिमता, कपटता, हृदयहीनता आदि अनेक विशेषताओं को प्रकट करने के लिए कविता का ऑटोमोबाइल शब्द उपयुक्त है। हमने प्रकृति तथा पर्यावरण की सदैव पूजा-अर्चना की है। सर्वसहनशीला धरती हमारा पुत्रवत् पालन-पोषण करती है। धरती नाश का नहीं, निर्माण का प्रतीक है। लेकिन प्रकृति के दुर्बल प्राणी मनुष्य आधुनिक मशीन के आविष्कार से सबल हो गये। ऐसी विस्फोनात्मक चीजें बनाकर प्रकृति या पर्यावरण को सँभालने की जिम्मेदारी से हटकर प्रकृति का सर्वनाश करते हैं। मानव की अस्मिता प्रकृति के विरोध में खड़े होकर सर्वथा शोषण कभी भी वांछनीय नहीं है। इसलिए कवि व्यक्त करते हैं:

“सचल अचल वस्तुओं की जननी,

सर्वसहनशीला अन्नापूर्णा वसुन्धरा

...

नाश नहीं निर्माण का प्रतीक है

पौधे या पेड़ों में कभी नहीं फली हैं छुरियाँ।

कन्द की जड़ से कभी नहीं निकला है विस्फोटक बम।

चरकर घास गाय ने दूध के बदले दिया नहीं हलाहल

सोखकर धरती का रस जहर नहीं बरसाता कभी भी बादल

तुम्हारी नहीं हमारी है धरती।”

भारतीय सांस्कृतिक गरिमा पर कवि गर्व करते हैं। हम संस्कृति को प्रकृति के अलग पक्ष के रूप में देखते हैं। लेकिन सभ्यता

Edit with WPS Office

की प्रगति ने हमें आज प्रकृति की अस्मिता और मूल्य को तोड़-मरोड़कर चलने के लिए विवश कर दिया है। हम आज अस्थायी सुख-लालसाओं के पीछे भागते हैं तो जीवन के सच्चे मूल्यों और संस्कृति के नमूनों को भूल डालते हैं। आधुनिक प्रगति प्रकृति की सच्चाइयों से बहुत दूर है। कवि हमको सचेत करते हैं कि प्रकृति की नाशावस्था से उसका उत्थान करना आधुनिक मानव का कर्तव्य है। इसके लिए नजर उठाना और प्रकृति की सच्चाइयों पर जागरूक रहना भी आवश्यक है। नागार्जुन का जीवन-दर्शन प्रकृति से जीवन पाने में है। कवि ने कल्पनालोक से सम्बन्ध तोड़कर कविता को जमीन के रस से जीवन्त बनाने का प्रयत्न किया है। उनकी दृष्टि साधारण से साधारण की ओर है और जीवन की सार्थकता परिस्थिति-बोध से जुड़ा हुआ तत्व बनती है।

'धरती' कविता का भावार्थ :

नागार्जुन की 'धरती' कविता आधुनिक मानव की उपभोक्तावादी, शोषक और युद्धोन्मादी मानसिकता पर तीखा प्रहार करती है। कवि धरती के मातृत्व, उसकी सहनशीलता और सृजन-शक्ति को रेखांकित करते हुए मनुष्य को उसके कर्तव्यों की याद दिलाते हैं।

धरती कोई उपभोग की वस्तु नहीं :

कवि स्पष्ट करते हैं कि धरती केवल स्वार्थ पूर्ति का साधन नहीं है। वह कोई पन्हाई हुई गाय नहीं है जिसे जब चाहा तब दुह लिया, न ही वह अनाजों का ऐसा ढेर है जिसे स्वार्थवश कुर्क करके मंडियों में बेच दिया जाए। वह कोई ऑटोमोबाइल या निर्जीव मशीन भी नहीं है जिसे मनुष्य अपनी मर्जी से स्टार्ट करे और पटना या दिल्ली ले जाकर कहीं भी लावारिस छोड़ दे। कवि इन बिंबों के माध्यम से आधुनिक मानव की स्वार्थपरक और यांत्रिक सोच पर चोट करते हैं।

श्रम और निष्ठा की माँग :

धरती चराचर (सचल-अचल) समस्त जगत की जननी और सर्वसहनशीला अन्नपूर्णा है। वह केवल झूठी स्तुति या खोखली पूजा-अर्चना नहीं चाहती, बल्कि कठोर परिश्रम (कर्षण, विकर्षण, सिंचन, वपन, तपन) चाहती है। वह मनुष्य से सच्चे मन का सचेतन स्पर्श, पसीना (स्वेदकण), आत्मीयता तथा पुत्रवत् श्रद्धा व परिचर्या की माँग करती है।

सदा सृजन और पोषण की प्रतीक :

धरती ने सदा प्राणियों को माता का वात्सल्य, पिता का परिपोषण और बिना किसी स्वार्थ के अविरल स्नेह और विविध प्रकार के फल, फूल और अन्न प्रदान किए हैं। लहलहाते हुए पौधे जीवन का संदेश देते हैं, मृत्यु का नहीं। प्रकृति निर्माण का प्रतीक है—पेड़-पौधों में कभी छुरियाँ नहीं फलतीं, जड़ों से विस्फोटक बम नहीं निकलते, गाय घास खाकर दूध देती है विष (हलाहल) नहीं, और बादल धरती का रस सोखकर कभी जहर नहीं बरसाते। प्रकृति सदा कल्याणकारी रही है।

युद्धोन्मादियों और शोषकों को चेतावनी :

कवि युद्ध के लालची, संहारक प्रवृत्तियों वाले साम्राज्यवादी दानवों (वज्रपाणि युद्धव्यसनी दानव) को ललकारते हुए कहते हैं कि यह धरती तुम्हारी नहीं, श्रमशील आम जनता की है। धरती ऐसे अपवित्र और विनाशकारी हाथों का स्पर्श स्वीकार नहीं करेगी। कवि श्रमजीवियों, वैज्ञानिकों और विश्वकर्माओं का आह्वान करते हैं जो तोप, तीर और तलवारों को पिघलाकर नए औजार और निर्माण के साधन बना रहे हैं।

अक्षुण्ण और सुरक्षित भविष्य :

धरती का कौमार्य आने वाली पीढ़ियों (अनागत विधाताओं) के कल्याण और शांति के लिए सुरक्षित है। जो विनाश, महाविनाश और प्रलय के मसीहा हैं, धरती कभी उनका वरण नहीं करेगी। यह पवित्र, अहल्या कुमारी धरती केवल सृजन, श्रम और शांति के उपासकों की है।

Edit with WPS Office

2. **बादल क्या है : राजेश जोशी**

कवि परिचय:

जन्म: समकालीन कविता के महत्त्वपूर्ण हस्ताक्षर राजेश जोशी का जन्म 18 जुलाई, 1946 को नरसिंहगढ़ नामक शहर मध्य प्रदेश में हुआ।

कार्यक्षेत्र: शिक्षा पूरी करने के बाद कुछ समय पत्रकारिता, अध्यापन कार्य तथा फिल्म निर्माता एवं अभिनेता के रूप में कार्य किया।

प्रमुख कृतियाँ:

उपन्यास: 'किस्सा कोताही'

काव्य-संग्रह: 'एक दिन बोलेंगे पेड़', 'मिट्टी का चेहरा', 'नेपथ्य में हंसी', 'दो पंक्तियों के बीच', 'चाँद की वर्तनी धूप घड़ी' आदि।

नाटक: 'जादू जंगल', 'अच्छे आदमी', 'तुम सआदत हसन मंटो हो', 'पाँसे', 'सपना मेरा यही सखी', 'हमें जवाब चाहिए' आदि।

बाल नाटक व काव्य-संग्रह: 'गेंद निराली मिठू की' (बाल काव्य संग्रह); 'ब्रह्मराक्षस का नाई' (बाल नाटक)।

पुरस्कार एवं सम्मान: उन्हें अपने साहित्यिक योगदान के लिए 'साहित्य अकादमी सम्मान', 'श्रीकांत वर्मा स्मृति सम्मान', 'पहल सम्मान', 'शमशेर सम्मान', 'मुक्तिबोध सम्मान', 'शिखर सम्मान', 'माखनलाल चतुर्वेदी पुरस्कार' आदि से पुरस्कृत किया गया है।

कविता का सार (बादल क्या है):

राजेश जोशी की कविता में बादल नवजीवन, क्रांति, परिवर्तन और जीवन संघर्ष का प्रतीक है। जल को सजीवों का जीवन ही माना जाता है, जैसे 'जल ही जीवन है' और बादल और जल का गहरा रिश्ता है। नीले रेगिस्तान में बदल ही तो जल के माध्यम से जीवन चेतना भर देते हैं। बादल प्रकृति का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा है जो मानवीय जीवन के लिए बहुत ही आवश्यक है। कविता में बादल बारिश लाते हैं जो फसलों के लिए ज़रूरी है और जीवन को सम्भव बनाते हैं। इसलिए बादल आते ही कवि का मन खुश हो जाता है। यहाँ बादल एक शक्तिशाली बल है जो सामाजिक और प्राकृतिक परिवर्तनों को जन्म देता है। साथ ही सामाजिक और राजनीतिक अन्याय के ख़िलाफ़ उठने वाली आवाज का प्रतिनिधित्व भी करता है। बादल संघर्ष और प्रतिरोध का प्रतीक भी है जो उत्पीड़न के ख़िलाफ़ आवाज़ उठाने को प्रेरित करते हैं। कवि के अनुसार बादल मानवीय संवेदनाओं से युक्त होते हैं। मनुष्य के अन्दर का पानी और बादल के अन्दर के पानी में कोई सूक्ष्म नाता है, जो उदासी, निराशा और आशा जैसे विभिन्न भावनाओं को व्यक्त करता है। बादल सारी सृष्टि के सजीवों के जीवन में पानी के फूल खिलाते हैं जिससे सजीवों का जीवन चक्र निरन्तर गतिमान रहता है।

कविता का भावार्थ:

ऊँट और हाथी के रूपक के रूप में बादल:

कविता की शुरुआत में कवि पूछते हैं कि क्या बादल नीले रेगिस्तान (आकाश) में विचरण करने वाला कोई ऊँट है, जिसके पेट में पानी हिलता है। अगले ही क्षण वे बादल की तुलना एक विशाल हाथी से करते हैं, जो अपनी सूँड में पूरी नदी का जल भरकर चारों दिशाओं में इधर-उधर उड़ाता फिरता है। इन बिंबों के माध्यम से कवि ने आकाश में तैरते बादलों के आकार, गति और जल-भंडारण की प्रवृत्ति को दर्शाया है।

मन का उल्लास और आंतरिक संबंध:

कवि विस्मय व्यक्त करते हुए कहते हैं कि बादलों के आगमन पर उनका मन इतना प्रफुल्लित और आनंदित क्यों हो उठता है।


Edit with WPS Office

वे विचार करते हैं कि मनुष्य के भीतर के जल (आँसू, संवेदनशीलता, भावनाएँ) और बादल के अंदर मौजूद जल के मध्य अवश्य ही कोई गहरा और सूक्ष्म रिश्ता है। बादल केवल बाह्य प्रकृति को ही नहीं भिगोते, बल्कि मनुष्य की आशा, निराशा और उदासी जैसी आंतरिक अनुभूतियों को भी स्पंदित करते हैं।

तितली और जीवनदायिनी शक्ति:

कवि आगे बादल को एक ऐसी विशाल तितली की उपमा देते हैं, जो समुद्र रूपी विशाल पुष्प से पराग-केसर रूपी जल चुराकर लाती है और संपूर्ण धरती पर 'पानी के फूल' खिलाती है। वर्षा की बूँदें धरती पर जीवन का संचार करती हैं, जिससे पूरी सृष्टि में हरियाली और नवजीवन का प्रसार होता है।

इस प्रकार, 'बादल क्या है' कविता केवल भौतिक वर्षा का वर्णन नहीं है, बल्कि यह जीवन, संघर्ष, सामाजिक परिवर्तन और प्रकृति तथा मनुष्य के आत्मीय व अविभाज्य संबंध की सुंदर अभिव्यक्ति है। बादल सृष्टि के जीवन चक्र को निरंतर गतिमान रखने वाले प्राणवान तत्व हैं।

3. पानी की प्रार्थना : केदारनाथ सिंह

कवि परिचय :

जन्म: 19 नवम्बर 1934, चकिया (बलिया), उत्तर प्रदेश।

शिक्षा: आरम्भिक शिक्षा गाँव में, बाद की शिक्षा—हाईस्कूल से एम.ए. तक वाराणसी में। 'आधुनिक हिन्दी कविता में बिम्ब-विधान' विषय पर सन् 1964 में पीएच.डी.।

काव्य-सृजन एवं सम्पादन :

विधिवत् काव्य-लेखन 1952-53 के आसपास शुरू किया।

सन् 1954 में पाल एलुआ की प्रसिद्ध कविता 'स्वतन्त्रता' का अनुवाद किया, जिसके ज़रिये नयी सौन्दर्य-दृष्टि और समकालीन काव्य-चेतना से पहला परिचय हुआ।

कुछ समय तक बनारस से निकलने वाली अनियतकालिक पत्रिका 'हमारी पीढ़ी' से सम्बद्ध रहे।

पहला कविता-संग्रह 'अभी बिल्कुल अभी' सन् 1960 में प्रकाशित।

उसी वर्ष प्रकाशित 'तीसरा सप्तक' के सहयोगी कवियों में से एक।

सम्प्रति: 'साखी' पत्रिका के प्रधान सम्पादक।

अध्यापन एवं कार्यक्षेत्र:

पेशे से अध्यापक; कार्यक्षेत्र का प्रसार महानगर से ठेठ ग्रामांचल तक।

उदय प्रताप कॉलेज, वाराणसी; सेंट एंड्रूज़ कॉलेज, गोरखपुर; उदित नारायण कॉलेज, पडरौना तथा गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर से सम्बद्ध रहे।

सन् 1976 से 1999 तक जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के भारतीय भाषा केन्द्र में अध्यापन और सम्प्रति उससे प्रोफेसर एमेरिटस के रूप में सम्बद्ध।

काव्यपाठ के लिए अमेरिका, रूस, कज़ाकिस्तान, लन्दन, पेरिस, इटली आदि देशों की यात्राएँ कीं।


Edit with WPS Office

सम्मान एवं पुरस्कार: भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार, साहित्य अकादेमी पुरस्कार, मैथिलीशरण गुप्त सम्मान (मध्य प्रदेश), कुमारन आशान पुरस्कार (केरल), दिनकर पुरस्कार (बिहार), जीवन भारती सम्मान (उड़ीसा), भारतभारती सम्मान (उत्तर प्रदेश), गंगाधर मेहर राष्ट्रीय कविता सम्मान (उड़ीसा), व्यास सम्मान आदि से सम्मानित।

अँग्रेज़ी, स्पेनिश, रूसी, जर्मन, हंगेरियन तथा प्राय: सभी प्रमुख भारतीय भाषाओं में कविताओं के अनुवाद। फ्रेंच तथा इतालवी में 'बाघ' शीर्षक लम्बी कविता के अनुवाद पुस्तकाकार प्रकाशित।

प्रकाशित कृतियाँ:

काव्य-संग्रह: अभी बिल्कुल अभी, ज़मीन पक रही है, यहाँ से देखो, अकाल में सारस, उत्तर कबीर और अन्य कविताएँ, टॉलस्टॉय और साइकिल, बाघ, सृष्टि पर पहरा तथा प्रतिनिधि कविताएँ।

गद्य कृतियाँ: कल्पना और छायावाद, आधुनिक हिन्दी कविता में बिम्बविधान, मेरे समय के शब्द, कब्रिस्तान में पंचायत तथा मेरे साक्षात्कार।

सम्पादित: ताना-बाना (आधुनिक भारतीय कविता से एक चयन), समकालीन रूसी कविताएँ, कविता दशक।

कविता का सार :

समकालीन हिन्दी कविता भी वैश्वीकरण के परिदृश्य में हावी हो जाने पर भी राष्ट्रीय-अन्तर्राष्ट्रीय, पारिस्थितिक समस्याओं में विमर्श करती रहती है, सबका ध्यान आकृष्ट कर लेती है। समकालीन कवियों की कविता में मनुष्य और प्रकृति का सामंजस्य विद्यमान है। इसमें निहित पारिस्थितिक बोध आज की उपभोक्ता प्रणाली के विरुद्ध हिन्दी कवियों की शंखध्वनि है। अति यान्त्रिकता में मानव अपनी शक्ति खो देता है। जीवन में नैसर्गिकता और सहज सौन्दर्यबोध समाप्त हो जाता है। जल प्रदूषण की विकट समस्या से लेकर जल के उपभोग तक में मनुष्य समाज क्रूर होता जा रहा है। जल को पवित्र और पूजनीय समझा जाता है। सो उसके प्रति करुणा और ममता का भाव होना चाहिए। जल की एक-एक बूँद के प्रति श्रद्धा और संवेदना का रिश्ता होना चाहिए।

केदारनाथ सिंह की 'पानी की प्रार्थना' प्रमाणित करती है कि प्राकृतिक दोहन का खमियाजा इस धरती के सभी प्राणियों को भुगतना है। प्रकृति और मानव जीवन इसी प्रकार घुल-मिल गये हैं कि एक को दूसरे से अलग करना सम्भव नहीं है। मनुष्य प्रकृति की गोद में पहुँचकर सुख-दु:ख एवं आनन्द पाना चाहता है।

कविता का भावार्थ :

प्रकृति के प्राचीनतम घटक की व्यथा:

कविता में पानी स्वयं को पृथ्वी का सबसे प्राचीन नागरिक बताते हुए ईश्वर से संवाद करता है। वह ईश्वर से अपने बीते एक दिन का लेखा-जोखा प्रस्तुत करने की अनुमति माँगता है।

जीव-जंतुओं के प्रति आत्मिक जुड़ाव:

पानी बताता है कि बहुत दिनों बाद एक चील उसके तट पर आई। आज के समय में चीलें लुप्तप्राय हो चुकी हैं। जब चील ने अपनी चोंच पानी में डुबोई, तो पानी को अत्यधिक संतोष और आनंद मिला। पानी को ऐसा लगा मानो घूँट-घूँट बनकर उसका रक्त में रूपांतरण हो रहा हो और वह एक नए जीवन (पुनर्जन्म) का अनुभव कर रहा हो। इसी प्रकार दोपहर बाद एक थका-प्यासा पशु आया और उसने चभर-चभर की आवाज़ करते हुए पानी पिया। पानी कहता है कि इस आवाज़ में उस पशु के तृप्त होने का सच्चा आनंद था।

प्रदूषण और मनुष्य की विवशता :

Edit with WPS Office

दोपहर के समय एक प्यासा चरवाहा पानी पीने के लिए झुका। उसने जैसे ही चुल्लू में पानी उठाया, उसे पानी के भीतर गंदगी व कचरा दिखाई दिया, जिससे वह सिहर उठा और पानी नीचे गिर गया। पानी इस स्थिति पर लज्जित है। वह कहता है कि आज का समय ऐसा आ गया है कि नदी हो या मनुष्य का चेहरा, झाँक कर देखने पर तल में केवल कचरा (मलिनता/गिरावट) ही दिखाई देता है।

बाज़ारीकरण और जल-संकट पर व्यंग्य :

अंत में पानी गहरी चिंता व्यक्त करते हुए कहता है कि मनुष्य भले ही चाँद या मंगल पर पानी खोज रहा हो, लेकिन धरती पर जीवनदायी प्राकृतिक जल दुर्लभ होता जा रहा है। विडंबना यह है कि इस गंभीर संकट के दौर में भी बाज़ारों में बोतलबंद पानी एक रहस्यमय स्रोत से निरंतर बिक रहा है। कवि इस बाज़ारीकरण, उपभोक्तावादी संस्कृति और मनुष्य की संवेदनहीनता पर तीखा कटाक्ष करते हैं।

4. **'उस दिन का जंगल' : लीलाधर जगूड़ी**

कवि परिचय :

जन्म: 1 जुलाई 1940, धंगण गाँव, टिहरी (उत्तराखंड)।

प्रारंभिक जीवन एवं संघर्ष:

ग्यारह वर्ष की अवस्था में घर से निकलकर अनेक शहरों व प्रांतों में विभिन्न प्रकार की आजीविका करते हुए जीवन यापन किया।

शालाग्रस्त शिक्षा के अनियमित क्रम के बावजूद हिन्दी साहित्य में एम.ए. की उपाधि प्राप्त की।

फौज (गढ़वाल राइफल) में सिपाही रहे। पढ़ने-लिखने की गहरी रुचि के कारण तत्कालीन रक्षामंत्री वी.के. कृष्ण मेनन को प्रार्थना पत्र भेजा, जिसके फलस्वरूप उन्हें फौज से मुक्ति मिली।

13 सितम्बर 1970 को एक भयंकर प्राकृतिक आपदा में इनके परिवार के 7 लोगों की एक साथ मृत्यु हो गई।

17 जून 2013 की त्रासदी में उत्तरकाशी स्थित इनका घर और बेटे का व्यावसायिक संस्थान नष्ट हो गया।

कार्यक्षेत्र एवं सेवाएँ:

1966–1980 तक शासकीय विद्यालयों में अध्यापन कार्य किया।

1980 में साक्षरता निकेतन, लखनऊ से प्रौढ़ों के लिए 'हमारे आखर' (प्रवेशिका) और 'कहानी के आखर' पाठ्य-पुस्तकें लिखीं।

उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग द्वारा राज्य सूचना सेवा के लिए चयनित हुए। सूचना एवं जनसम्पर्क विभाग की पत्रिका 'उत्तर प्रदेश' और नए राज्य उत्तरांचल की पहली पत्रिका 'उत्तरांचल दर्शन' का संपादन किया।

उत्तरांचल के प्रथम सूचना सलाहकार और उत्तराखंड संस्कृति साहित्य एवं कला परिषद के प्रथम उपाध्यक्ष रहे।

प्रमुख कविता-संग्रह:

शंखमुखी शिखरों पर, नाटक जारी है, इस यात्रा में, रात अब भी मौजूद है, बची हुई पृथ्वी, घबराए हुए शब्द, भय भी शक्ति देता है, अनुभव के आकाश में चाँद, महाकाव्य के बिना, ईश्वर की अध्यक्षता में, खबर का मुँह विज्ञापन से ढका है, जितने लोग उतने प्रेम आदि।


Edit with WPS Office

गद्य रचनाएँ: मेरे साक्षात्कार, रचना प्रक्रिया से जूझते हुए।

पुरस्कार एवं सम्मान:

रघुवीर सहाय सम्मान, भारतीय भाषा परिषद पुरस्कार।

'अनुभव के आकाश में चाँद' के लिए 1997 में साहित्य अकादमी पुरस्कार।

2004 में पद्मश्री से अलंकृत।

'पाँच बेटे' नाटक पर अखिल भारतीय नाट्यलेख प्रतियोगिता (1984) में प्रथम पुरस्कार।

कविता का सार :

स्रोत संग्रह: यह कविता लीलाधर जगूड़ी के प्रसिद्ध काव्य-संग्रह 'बची हुई पृथ्वी' से ली गई है।

मूल भाव :

कविता में स्मृतियों (यादों) के माध्यम से अतीत और वर्तमान का सुंदर समन्वय किया गया है।

कवि का मानना है कि अतीत का पतझड़ हमेशा निराशाजनक नहीं होता, बल्कि वह नए भविष्य (वसन्त) को जन्म देता है।

घास और पेड़ का प्रतीक विधान:

घास: यह निम्न/मध्यमवर्गीय समाज की एकजुटता का प्रतीक है। घास जैसे-जैसे बढ़ती है, आपस में मिलकर सघन होती जाती है और ज़मीन से जुड़ी रहती है।

पेड़: यह आधुनिकता, आभिजात्य वर्ग और व्यक्तिवाद के अकेलेपन का प्रतीक है। पेड़ जितना बड़ा होता जाता है, उतना ही ज़मीनी यथार्थ से दूर होकर अकेला और अपने आप में उलझा हुआ रह जाता है। साथ ही, पेड़ पुरानी पीढ़ी का भी प्रतीक है जो सबको आश्रय देती थी।

संबंधों की प्रगाढ़ता: कवि अतीत के उस समय को याद करते हैं जब दो लोग किताबों के दो पृष्ठों (पेजों) की तरह अभिन्न जुड़े हुए थे और उनके रिश्ते में 'समय रूपी चाकू' की धार नहीं घुसी थी।

आशावादी अंत: कविता का अंत आशावादी है। स्मृतियों के पुराने और घने जंगल को देखकर आने वाले 'वसन्त' की उम्मीद जगती है, जो जीवन में नए बदलाव और नवीनता का संचार करता है।

सुधियों के वातायन से कुछ कही, कुछ अनकही संवेदनाओं की एक उत्तम कविता है ‘उस दिन का जंगल’। समकालीन कविता के बहुत परिचित एवं चर्चित कवि लीलाधर जगूड़ी की यह कविता उनके संग्रह ‘बची हुई पृथ्वी’ में संगृहीत है। जगूड़ी कविता को हवा, पानी और आग के बाद सबसे पुरानी चीज मानते हैं। एक आदिम कारखाना जहाँ भाषा और जिन्दगी हर बार फिर से ढाली जाती है।

‘उस दिन का जंगल’ कविता में प्रतीकों तथा बिम्बों के सहारे कवि ने अतीत एवं वर्तमान को साथ-साथ उपस्थित किया है। पुराना कभी पुराना नहीं होता, वह हर नये को जन्म देता है। इस कविता में अतीत का पतझर है जिसकी पत्तियाँ आज भी झड़ती जा रही हैं। वह सुखमय था। सुन्दर था। उसमें हताशा नहीं थी। रोशनी थी। कविता के कई बिम्ब हैं जो मनोभावों को दर्शाते हैं। यहाँ यह बताना आवश्यक है कि जगूड़ी पर्यावरण की चिन्ता सीधे-सीधे न तो करते हैं न ही रचते हैं लेकिन उनकी कविता में पेड़, घास, जंगल, पहाड़, समुद्र, चिड़िया ये सभी सुरक्षित हैं। यहाँ ऋतुएँ भी हैं, हवाएँ भी हैं और जल की कल-कल ध्वनि भी है। पर्यावरण के नये सन्दर्भ हैं।


Edit with WPS Office

इस कविता में सम्बन्धों की टूटन है, चटकन है। पेड़ की तुलना में घास अधिक श्रेयस्कर है क्योंकि वह मिलजुलकर रहना जानती है। वह धरती से ऊर्जा लेकर उसी पर रहना चाहती है। घास यहाँ निम्न मध्यमवर्गीय जीवन शैली का भी प्रतीक है जो अपनी जड़ों से जुड़कर रहना चाहते हैं। घास की तुलना में पेड़ बड़े होकर जमीनी यथार्थ से दूर चले जाते हैं। अपने अकेलेपन में उलझे हुए मनुष्य की भाँति उनकी नियति हो जाती है। यहाँ हम पेड़ को आभिजात्य एवं आधुनिकता में डूबे हुए मनुष्य का प्रतीक मान सकते हैं।

इस कविता के जंगल में पेड़ पुरानी पीढ़ी का भी प्रतीक है जो सबको आश्रय देती थी। मनुष्य ही नहीं पशु-पक्षी सबके घरौंदे एवं घोंसले बनाती थी। वह समझौतापरस्त थी। उसमें नये को स्वीकार करने का गुण था।

कविता के एक अंश में कवि पुरानी एवं नयी दोनों पीढ़ियों को समरस देखना चाहता है। समय के चाकू की धार दोनों को अलग नहीं कर सकती। कविता का अन्त आशावादी है।

स्मृतियों के पतझर वाले घने, पुराने जंगल को देख कर वसन्तमय भविष्य की कल्पना की जा सकती है। कविता में सब कुछ सरल है किन्तु सपाट नहीं।

जगूड़ी ऐसी काव्य-भाषा का सृजन करते हैं जिसमें रातों-रात खाल का रंग बदलने लगता है। प्रतीक खुद-ब-खुद बोलने लगते हैं। शब्द मस्तिष्क पर छा जाते हैं और कथ्य हृदय को सहज ही स्पर्श करने लगता है। 'उस दिन का जंगल' बदले हुए रंगों में हमारे मध्य आज भी मौजूद है।

कविता की पंक्तियाँ एवं भावार्थ :

पिछले पतझर में

हम कितने रोशन थे

जैसे उजाले के दो पेड़

भावार्थ : कवि अतीत के दिनों को याद करते हुए कहते हैं कि बीते हुए पतझड़ (कठिन दौर) में भी वे दोनों हताश नहीं थे, बल्कि प्रकाश और सकारात्मकता से भरे हुए थे। उनका अस्तित्व उजाले से भरे दो वृक्षों की भाँति जीवंत और प्रकाशित था।

घास बड़ी होती है

तो आपस में दोस्त हो जाती है।

पेड़ बड़े होते हैं

तो अकेले हो जाते हैं

(अपने-आपमें उलझे हुए)

भावार्थ : कवि यहाँ प्रकृति के माध्यम से मानवीय संबंधों का यथार्थ प्रस्तुत करते हैं। घास बढ़ने पर और घनी होकर आपस में मिल जाती है (एकजुटता और ज़मीनी जुड़ाव का प्रतीक)। इसके विपरीत, पेड़ जैसे-जैसे बड़ा और ऊँचा होता है, वह अपनी शाखाओं और विस्तार में उलझकर अकेला पड़ जाता है (आधुनिक मनुष्य के अकेलेपन और अभिजात्य वर्ग का प्रतीक)।

पुराने पेड़ों के सान्निध्य में

चिड़ियों के घोंसले थे

पुराने पानी में

Edit with WPS Office

नये पानी के घुसने का शोर था

भावार्थ : पुराने पेड़ (पूर्वज या पुरानी पीढ़ी) सबको अपनी छाया और आश्रय देते थे, जहाँ पक्षियों के बसेरे सुरक्षित थे। जीवन में निरंतरता थी—जैसे पुराने जल में नए जल का प्रवाह मिलने से जीवन में गतिशीलता और सकारात्मक हलचल बनी रहती थी।

आसमान थोड़े-से बादलों के पीछे

पूरा छिपा हुआ था

और हम दो पेजों की तरह

चिपके हुए थे

(समय हमारे बीच

चाकू की तरह नहीं घुसा था)

भावार्थ : कवि उस आत्मीयता को रेखांकित करते हैं जब वे एक-दूसरे से किताब के दो पन्नों की तरह अभिन्न जुड़े थे। उस समय उनके संबंधों में दरार नहीं थी; समय रूपी चाकू ने उन्हें एक-दूसरे से काटकर अलग नहीं किया था।

हमारे चारों ओर

हजारों वर्ष पुराना जंगल था

देखकर

जिसने महसूस किया

आने वाला वसन्त

दूर

उस दिन वह ऐसा जगा

हमारे लावण्य-भर चेहरे खाकर

कि रातोंरात

अपनी खाल का रंग बदलने लगा।

भावार्थ : उनके चारों ओर हज़ारों वर्ष पुरानी परंपरा और स्मृतियों का जंगल मौजूद था। उस घने और पुराने जंगल ने भी आने वाले सुनहरे भविष्य (वसन्त) की आहट को पहचान लिया था। जब वह चेतना जागी, तो उसने हमारे सुंदर चेहरों की कांति को आत्मसात कर लिया और देखते ही देखते वातावरण ने एक नए रूप और नई ऊर्जा का आवरण (रंग) धारण कर लिया।

5. **'गंगा को प्यार' और 'इक्कीसवीं शताब्दी की ओर' : अरुण कमल**

कवि परिचय :

अरुण कमल का जन्म 15 फरवरी, 1954 को नासरीगंज (रोहतास), बिहार में हुआ था।

Edit with WPS Office

प्रकाशित रचनाएँ :

कविता-संग्रह: 'अपनी केवल धार' (1980), 'सबूत' (1989), 'नये इलाके में' (1996) तथा 'पुतली में संसार' (चौथा कविता-संग्रह)।

आलोचना : 'कविता और समय' (1999)।

अनुवाद कार्य: वियतनामी कवि 'तो हू' की कविताओं-टिप्पणियों की अनुवाद-पुस्तिका, मायकोवस्की की आत्मकथा का अनुवाद तथा अँग्रेज़ी में 'वॉयसेज' नाम से भारतीय युवा कविता के अनुवादों की पुस्तक प्रकाशित। देश एवं विदेश के अनेक साहित्यकारों की रचनाओं के अनुवाद विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित।

स्तम्भ-लेखन : प्रभात खबर (राँची) में 'अनुस्वार' नाम से पाक्षिक अनुवाद-स्तम्भ; नवभारत टाइम्स (पटना) में 'जन-गण-मन' स्तम्भ; और इंटरनेट पत्रिका 'लिटरेट वर्ल्ड' में स्तम्भ-लेखन।

पुरस्कार व सम्मान :

'भारतभूषण अग्रवाल स्मृति' पुरस्कार (1980)

'सोवियत भूमि नेहरू' पुरस्कार (1989)

'श्रीकान्त वर्मा स्मृति' पुरस्कार (1990)

'रघुवीर सहाय स्मृति' पुरस्कार (1996)

'शमशेर सम्मान' (1997)

'नये इलाके में' कविता-पुस्तक के लिए वर्ष 1998 का 'साहित्य अकादेमी' पुरस्कार।

सांस्कृतिक व अकादमिक गतिविधियाँ: एफ्रो-एशियाई युवा लेखक सम्मेलन (कांगो) में भारतीय प्रतिभागी; रूस, चीन, इंग्लैंड, पाकिस्तान तथा म्यांमार की साहित्यिक यात्राएँ। उर्दू, उड़िया, बांग्ला तथा पंजाबी में इनकी कविताएँ अनूदित। साहित्य अकादेमी की सामान्य परिषद् एवं हिन्दी सलाहकार समिति के सदस्य; हिन्दी साहित्य सम्मेलन तथा केन्द्रीय हिन्दी संस्थान (आगरा) की कार्य समिति एवं भारतीय उच्च अध्ययन संस्थान (शिमला) की सामान्य समिति के सदस्य।

सम्प्रति: पटना विश्वविद्यालय के अंग्रेज़ी विभाग में अध्यापन।

1. "गंगा को प्यार"

कविता का सार :

"अरुण कमल की कविता 'गंगा को प्यार' भारतीय मनुष्य और गंगा के आत्मीय, अन्तरंग एवं शाश्वत सम्बन्धों की पवित्र गाथा है। गंगा के बिना भारतीय जीवन तथा संस्कार की कल्पना भी असम्भव है। प्रथम स्नान से लेकर अन्तिम स्नान तक के अनुष्ठान यहीं सम्पन्न होते हैं।

गंगा के बिना हमारा अस्तित्व भी असम्भव है। गंगा जीवन का आधार और प्राण है।

यह कविता केवल पर्यावरण की बाह्य चिन्ताओं का प्रतिफल नहीं बल्कि सहस्राब्दियों के सहजनवाँ और कृतज्ञताबोध की विनम्र अभिव्यक्ति है। कविता में प्रयुक्त बिम्ब ऋग्वैदिक ऋचाओं की स्मृति से सम्पन्न हैं। साथ ही वर्तमान की विभीषिकाओं को भी रेखांकित करती है। आदि शंकराचार्य, विद्यापति, केशव एवं भारतेन्दु की महान रचनाओं की परम्परा का यह नवीनतम जल

Edit with WPS Office

है।"

"गंगा को प्यार" कविता का अर्थ :

गंगा तट की शांत प्रकृति एवं जीव-जंतुओं का सहज संबंध:

कवि ग्रीष्म ऋतु में शांत चित्त से गंगा किनारे बैठा है। आकाश विस्तृत और नीला है, मंद-मंद बहती हवा वातावरण में एक पूर्णता का अहसास कराती है।

नदी में दूर तैरती नाव का पाल हवा के सहारे फूला हुआ है।

पक्षी बिना कोई ध्वनि किए बड़ी सहजता से जल की सतह को छूकर उड़ जाते हैं और कोई गाय बड़ी सावधानी से किनारे पर उतरकर पानी पीती है, जिससे गंगा में हल्की तरंगें उठती हैं। यह दृश्य गंगा और प्रकृति के स्वाभाविक व प्रेमपूर्ण तालमेल को दर्शाता है।

मानव जीवन का गंगा से गहरा जुड़ाव व वर्तमान संकट (प्रदूषण):

कवि कहते हैं कि जिनका पूरा जीवन और अस्तित्व (मिट्टी) गंगा के जल से निर्मित हुआ है, वे यह कभी सोच भी नहीं सकते कि गंगा कभी विषैली हो सकती है।

किंतु आज की क्रूर वास्तविकता यह है कि स्वार्थी मनुष्यों ने गंगा के द्वार पर प्रदूषण का "विषपात्र" रख दिया है—जल इतना दूषित हो रहा है कि उसके ऊपर उड़ता हुआ पक्षी भी उस विषैली भाप/गर्मी से झुलस सकता है। एक दिन गंगा के लुप्त या निष्प्राण हो जाने का खतरा मंडरा रहा है।

गंगा के विरुद्ध षड्यंत्र और गंगा का विराट स्वरूप:

कवि चेतावनी देते हैं कि गंगा को प्रदूषित करना केवल एक नदी के साथ नहीं, बल्कि समूचे हिमालय, पृथ्वी और पूरे ब्रह्मांडीय नक्षत्र मंडल के साथ विश्वासघात और षड्यंत्र है।

गंगा केवल एक नदी नहीं, बल्कि माँ के दूध के समान जीवनदायिनी है। भारतीय संस्कृति में जन्म के पहले स्नान से लेकर मृत्यु के अंतिम संस्कार तक सब कुछ गंगा के सान्निध्य में ही होता है।

गंगा अनंत काल से हमारी धमनियों में बहते रक्त की तरह बह रही है और एक विशाल सजग आँख बनकर हमारे समस्त सुख-दुखों को देखती आई है। वृक्षों और पुष्पों के जीवन का सूत्र गंगा से ही निर्बाध रूप से जुड़ा हुआ है।

मानवता और प्रेम का निष्कर्ष:

अंत में कवि एक दार्शनिक सत्य उद्घाटित करते हैं: जो व्यक्ति दूसरे मनुष्य (आदमी) से प्रेम नहीं कर सकता, उसके लिए न तो गंगा का कोई अर्थ है, न ही मातृभूमि का और न ही इस सृष्टि के किसी तारे का। मनुष्यता के प्रति प्रेम ही प्रकृति और संस्कृति के प्रति सच्चे प्रेम का आधार है।

2. "इक्कीसवीं शताब्दी की ओर"

कविता का सार :

"कवि अरुण कमल द्वारा लिखित कविता 'इक्कीसवीं सदी की ओर' सन् 1989 में प्रकाशित उनका दूसरा कविता-संग्रह 'सबूत' से ली गयी है। यह एक प्रसिद्ध कविता है, जो इक्कीसवीं सदी के बदलते हुए प्राकृतिक, सामाजिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक परिदृश्य का चित्रण करती है। जीवन के यथार्थ को उजागर करते हुए समाज में व्याप्त विषमता, अन्याय, संघर्ष


Edit with WPS Office

और चुनौतियों पर प्रकाश डालती है। मनुष्य विकास के नाम पर प्रकृति को नुकसान पहुँचा रहा है लेकिन प्रकृति का विनाश अन्ततः मनुष्य का ही विनाश होता है। हर नदी का घाट श्मशान और बगीचा कब्रिस्तान हो रहा है। एक तरफ़ मृत्यु है तो दूसरी तरफ़ ऐसा सत्ता धारी वर्ग है जो हमें सब कुछ अच्छा होने के सपने दिखाते हुए बधाई देता है। इस विडम्बना का मार्मिक चित्रण कविता करती है।

इक्कीसवीं सदी की ओर जाने की दौड़ में कम्प्यूटर जैसे दानव ने सबको ग्रस लिया है। विकास के नाम पर आदिवासियों को विस्थापित किया जा रहा है। यह दुनिया जो सबका घर है परन्तु अब सब को एक-एक करके किरायेदार बनने को मजबूर किया जा रहा है। विदेशी कम्पनियाँ देश के पैसे लूट रही हैं। जैसे व्यापार के लिए आयी ईस्ट इंडिया कम्पनी ने हमें गुलाम बनाकर वह मालिक बन गयी है। हमें हमारी जड़ों से उखाड़ कर अपने ही वतन में शरणार्थी बनाया गया है। जालन्धर, सूरत, अलीगढ़, भोपाल और हैदराबाद जैसे शहरों में बड़े-बड़े साम्प्रदायिक दंगों में रक्तपात हुआ है। आये दिन मनुष्य-ही-मनुष्य की हत्याएँ कर रहा है। और हम इक्कीसवीं सदी की ओर जा रहे हैं।

प्रस्तुत कविता राजनीतिक व्यवस्था में होने वाले बदलाव और उससे उत्पन्न चुनौतियों को भी दर्शाती है। हम एक-एक पल मौत के क़रीब और क़रीब जा रहे हैं। दुनिया में कितनी जगहों पर युद्ध के नाम पर लोग मारे जा रहे हैं। इसमें अधिकतर जगहों पर अमेरिका का स्वार्थ ही दिखाई देता है। जैसे अमेरिका के राष्ट्रपति रानाल्ड रीगन ने मौत की चिट्ठियों पर मोहर लगाई है। यहाँ कवि ने उपभोक्तावाद, बाज़ारवाद और आधुनिकता के प्रभाव को उजागर किया है।

अतः कवि अरुण कमल हमें इक्कीसवीं सदी की बदलती हुई चुनौतियों से जूझने की प्रेरणा देते हुए कहते हैं कि उठो और चलो, सूर्य के रथ के आठवें घोड़े हो तुम। हम श्रम करने वाले लोग हैं जो बहुत आगे जाना चाहते हैं। समूचे ब्रह्माण्ड में टहलेंगे। चलते-चलते पाँव में छाले पड़े तो भी कोई परवाह नहीं है, क्योंकि सृष्टि का पहला पानी अभी तक हमारा इन्तज़ार कर रहा है। संघर्ष के सिवा कोई और रास्ता नहीं है। समग्र जीवन पर अँधेरे का ताला लगा हुआ है। आओ हम सब मिलकर उसे ताले को खोलेंगे।"

"इक्कीसवीं शताब्दी की ओर" कविता का अर्थ:

तथाकथित विकास की विभीषिका व मृत्यु का वातावरण:

कवि व्यंग्य करते हैं कि हम जिस इक्कीसवीं सदी की ओर कदम बढ़ा रहे हैं, वहाँ जीवन के स्थान पर विनाश का बोलबाला है —नदियों के घाट श्मशान में और फलते-फूलते बगीचे कब्रिस्तानों में तब्दील हो रहे हैं।

प्रदूषण और विषाक्त वातावरण के कारण नवजात शिशु मृत पैदा हो रहे हैं और युवतियों के गर्भ गिर रहे हैं, फिर भी समाज इस भयावहता को नजरअंदाज कर उत्सवधर्मिता में लीन है।

नव-उपनिवेशवाद, बाज़ारवाद और मशीनीकरण:

देश की संपूर्ण संपदा, जल-जंगल-जमीन और घरेलू संस्कृति की नीलामी हो रही है। अमेरिकी, फ्रांसीसी, इतालवी और ब्रिटिश बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ (नए रूप में ईस्ट इंडिया कंपनी) हमारे संसाधनों को लूटने आ पहुँची हैं।

इंसान अब अपनी ही धरती पर मालिक से "किराएदार" बन गया है। कंप्यूटर और मशीनीकरण मनुष्य के श्रम, चेहरे और अस्मिता को निगल रहे हैं।

साम्प्रदायिक दंगे, विस्थापन और साम्राज्यवादी युद्ध:

जालंधर, सूरत, अलीगढ़, भोपाल और हैदराबाद जैसे शहरों में सांप्रदायिक हिंसा और औद्योगिक त्रासदियों के कारण खून बह रहा है। अपने ही देश में लोग अनाथ, विधवा और शरणार्थी बनने को विवश हैं।

वैश्विक स्तर पर साम्राज्यवादी शक्तियाँ (जैसे रोनाल्ड रीगन का युद्धोन्माद) युद्ध और विनाश के फरमान जारी कर रही हैं।


Edit with WPS Office

जीवन और मृत्यु के इस द्वंद्व में समूची मानवता दांव पर लगी है।

श्रम की शक्ति, संघर्ष और नव-निर्माण का आह्वान:

इन तमाम निराशाओं के बीच कवि कालजयी चेतना का आह्वान करते हैं। वे आम श्रमजीवी मनुष्य को "सूर्य के रथ का आठवाँ घोड़ा" (सृजन और ऊर्जा का नया प्रतीक) कहकर उठ खड़े होने और आगे बढ़ने की प्रेरणा देते हैं।

कवि का विश्वास है कि मेहनतकश जनता अपने बच्चों को कंधों पर बैठाकर शताब्दियाँ पार करते हुए आगे बढ़ेगी। भले ही इस पथ पर चलते हुए पैरों में छाले पड़ जाएँ या कुछ हताश लोग बीसवीं सदी के अंतिम पड़ाव पर ही छूट जाएँ, लेकिन संघर्षशील मनुष्य मिलकर शोषण और अज्ञान रूपी "अंधेरे का ताला" अवश्य खोलेंगे।

6. भारत की ऋतुएँ : साईमीरा जोशी

कवि परिचय :

महाराष्ट्र के चन्द्रपुर में पली-बढ़ी साईमीरा जोशी की माता का नाम श्रीमती शारदा शुकुल है और पिता का नाम श्री विनोद कुमार शुकुल है। श्रीराम जोशी उनके पति का नाम हैं। आपने वाणिज्य शाखा से स्नातक की पढ़ाई की है तथा हिन्दी में एम. ए. और एम.फिल् की उपाधि प्राप्त की है। साथ ही स्नातकोत्तर अनुवाद डिप्लोमा, राष्ट्रभाषा प्रवीण आदि उपाधियों से भी आप सम्मानित हैं। वर्तमान समय में हिन्दी साहित्य में संशोधन (पीएच. डी.) कार्य शुरू है। अध्ययन और लेखन में रुचि होने के कारण निरंतर भाषा और साहित्य से जुड़ी है। संसदीय अधिनियम 14, सन् 1964 के द्वारा 'राष्ट्रीय महत्त्व की संस्था' दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा की प्रथम श्रेणी प्रमाणित प्रचारक हैं। वर्तमान में आप वूमेंस क्रिश्चियन कॉलेज, चेन्नई के हिन्दी विभाग में अतिथि व्याख्याकार के रूप में कार्यरत हैं।

हिन्दी भाषा अध्ययन-अध्यापन के साथ-साथ हिन्दी साहित्य सृजन में भी आप महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। 'राजस्थान पत्रिका', (चेन्नई) में कविताओं का प्रकाशन हुआ है। राष्ट्रीय स्तर की पत्र-पत्रिकाओं में नियमित रूप से अनेक शोधालेख प्रकाशित हो चुके हैं। आप एक अच्छी अध्यापक के साथ एक प्रभावी वक्ता भी हैं। आपने कई मंचों पर काव्य प्रस्तुति के साथ व्याख्याता के रूप में कई सेमिनार और संगोष्ठियों में सहभागिता की हैं।

प्रसार भारती, ऑल इंडिया रेडियो, चेन्नई द्वारा 'स्वतन्त्रता सेनानी के जीवन और कार्य' का प्रसारण हुआ है। हिन्दी प्रचार-प्रसार के लिए कई राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय पुरस्कारों से आपको सम्मानित किया गया है।

कविता का सार :

साईमीरा जोशी द्वारा लिखित कविता 'भारत की ऋतुएँ,' जी.पी. वर्मा द्वारा सम्पादित 'अनाम तकाजे' इस कविता-संग्रह से ली गयी है। इस कविता में कवयित्री ने भारत देश की विविध ऋतुओं की सुन्दरता और महत्ता का भावपूर्ण चित्रण किया है। भारत का भौगोलिक क्षेत्र छह ऋतुओं से गुज़रता है, जिससे हमारी प्रकृति और पर्यावरण का सन्तुलन बनाये रखने में बहुत बड़ी सहायता मिलती है। एक के बाद एक ऋतु की श्रृंखला प्रकृति के पर्यावरणीय गहने हैं, जो मानवीय जीवन को भरण पोषण के साथ निरोग स्वास्थ्य देते हैं। भारत की छह ऋतुएँ—वसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमन्त और शिशिर न केवल धरती को सजाती हैं, बल्कि मानव जीवन को आनन्दित भी करती हैं। जिनकी आज के प्रदूषणयुक्त वातावरण में बहुत ही आवश्यकता महसूस हो रही है।

वसन्त ऋतु में पेड़ों पर नयी कोपलें आती हैं और वातावरण में नयी ताजगी भर जाती है। ग्रीष्म ऋतु में गर्मी तीव्र हो जाती है और तापमान बढ़ता है। लेकिन वर्षा ऋतु का सब बेसब्री से इन्तजार करते हैं और जब बारिश होती है तब सभी उसका आनन्द लेते हैं। शरद ऋतु में हल्की ठण्ड का एहसास होता है, जो बहुत सुखद लगता है। हेमन्त ऋतु में मन उत्साह से भर जाता है और त्योहारों का माहौल घर-घर में होता है। शिशिर ऋतु में अत्यधिक ठण्ड पड़ती है, जिससे शरीर काँपने लगता है और चारों ओर कोहरा छा जाता है।

Edit with WPS Office

अन्त में कवयित्री कहती है कि इन ऋतुओं में ही जीवन का सार समाया हुआ है। यह ऋतुओं की विविधता भारत को अद्वितीय बनाती है। कवयित्री इस सुन्दर प्राकृतिक विविधता के लिए भारत देश को धन्य कहती है। साथ ही ऋतुओं की इस पर्यावरणीय श्रृंखला का संरक्षण करने का सन्देश भी हमें देती है।

कविता की पंक्तियाँ एवं भावार्थ :

भारत की ऋतुओं का क्या कहना

यह ऋतुएँ हैं भारत का गहना,

सारी ऋतुएँ हैं मनकी भाती

हर ऋतु हम सबको लुभाती।

एक वर्ष में, यह छह ऋतुएँ

धरती का श्रृंगार हैं करती,

बसन्त, ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमन्त, शिशिर

इन नामों से यह जानी जातीं।

भावार्थ: कवयित्री कहती हैं कि भारतवर्ष की ऋतुओं का सौंदर्य अवर्णनीय और अनुपम है। ये बदलती ऋतुएँ भारतभूमि के आभूषण (गहने) के समान हैं, जो इसके रूप को निखारती हैं। यहाँ आने वाली प्रत्येक ऋतु मन को भाने वाली तथा सभी को अपनी ओर आकर्षित करने वाली होती है। एक वर्ष के चक्र में कुल छह ऋतुएँ आती हैं—बसंत, ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमंत और शिशिर। ये छहों ऋतुएँ मिलकर इस धरती का अनुपम श्रृंगार करती हैं।

बसन्त ऋतु जब है आती

पेड़ों पर पत्ते है लाती,

ग्रीष्म ऋतु कहर है ढाती

तापमान धरती का बढ़ाती।

वर्षा का इन्तज़ार हम करते

फिर सब इसके मज़े हैं लेते।

शरद ऋतु का मौसम आता

हल्की ठण्ड का एहसास दिलाता।

हेमन्त ऋतु मन में, उमंग भरता

और त्योहारों से हर घर जगमगाता,

शीत ऋतु में बदन कँपकँपाता

हर तरफ़ कोहरा छाता।

Edit with WPS Office

भावार्थ: बसन्त ऋतु: बसंत के आगमन पर प्रकृति खिल उठती है और पेड़ों पर नई हरी-भरी कोपलें व पत्ते आ जाते हैं।

ग्रीष्म ऋतु: इसके बाद ग्रीष्म (गर्मी) ऋतु आती है, जो प्रचंड धूप और तापमान बढ़ाकर अपना कहर ढाती है।

वर्षा ऋतु: भीषण गर्मी के बाद सभी लोग वर्षा ऋतु की प्रतीक्षा करते हैं और बारिश की फुहारों व हरियाली का खूब आनंद लेते हैं।

शरद ऋतु: शरद ऋतु के आते ही मौसम सुहावना हो जाता है और हल्की-हल्की ठंडक की सुखद अनुभूति होने लगती है।

हेमन्त ऋतु: हेमंत ऋतु मन में नया उल्लास और उमंग भर देती है। इस दौरान कई प्रमुख पर्व व त्योहार आते हैं, जिससे प्रत्येक घर रोशनी और उल्लास से जगमगा उठता है।

शीत (शिशिर) ऋतु: इसके उपरांत अत्यधिक ठंड (शीत ऋतु) का दौर आता है, जिसमें ठिठुरन से शरीर काँपने लगता है और चारों ओर घना कोहरा छा जाता है।

देखा जाये, इन ऋतुओं में

जीवन का सार समाता,

धन्य हमारा भारत देश है।

भावार्थ: अंत में कवयित्री स्पष्ट करती हैं कि यदि गहराई से विचार किया जाए, तो प्रकृति के इन बदलते रूपों और ऋतुओं के चक्र में ही मानव जीवन का वास्तविक सार और संतुलन समाया हुआ है। ऐसी अद्भुत और विविध प्राकृतिक संपदा से परिपूर्ण होने के कारण हमारा भारत देश वास्तव में धन्य है।

7. बेटी : प्रेम रंजन अनिमेष

कवि परिचय:

प्रेम रंजन अनिमेष का जन्म बिहार के आरा नामक शहर में 1968 में हुआ। प्रेम रंजन अनिमेष देश के सर्वाधिक सशक्त, नवोन्मेषी एवं बहुआयामी रचनाकारों में अग्रगण्य हैं। उनका बचपन से ही साहित्य, कला एवं संगीत से जुड़ाव रहा है। उनके 'मिट्टी के फल', 'कोई नया समाचार', 'संगत', 'अँधेरे में अन्ताक्षरी', 'बिना मुँडेर की छत', 'संक्रमण काल', 'माँ के साथ', 'स्त्री सूक्त', 'जीवन खेल', 'कवि का शब्द', 'कुछ पत्र, कुछ प्रमाणपत्र, कुछ साक्ष्य', 'ऊँट', 'अवगुण सूत्र', 'लोक शास्त्र', 'अन्तरंग अनतरंग', 'नयी कवितावली' आदि प्रसिद्ध काव्य-संग्रह हैं। साथ ही 'माई रे', 'स्त्री गाथा', 'पर्दे की दुनिया', 'दि हिन्दी टीचर' आदि उनके द्वारा रचित उपन्यास हैं। वे बाल कवि तथा ग़ज़लकार के रूप में ख्यात हैं। वर्तमान में झारखण्ड के रांची में ये उच्च पदस्थ बैंक अधिकारी के रूप में कार्यरत हैं।

बेटी : कविता का सार

जल ही जीवन है। जल है तो कल है। वह पाँच तत्त्व में से एक है जो हमारे जलवायु या आबोहवा का अहम हिस्सा है। इस पृथ्वी पर तीन हिस्सा पानी और केवल मात्र एक हिस्सा धरती है, ठीक वैसे ही हमारे मानवी शरीर का है। आदि उद्भवन और प्रथम अवतरण की अवधारणा भी जल से जुड़ी हुई है। पानी को लेकर जीवन से जुड़े न जाने कितने कहन और मुहावरे हैं; जैसे पानी रखना, पानी बदलना, पानी लगना, पानी उतरना, पानी सर से गुज़रना आदि।

उसी तरह स्त्री को भी सृजन और संसृति की स्रोतस्विनी माना गया है। वह प्रकृति रूपा है परन्तु उसके प्रति भी कई बार पुरुषी अहंपूर्ण व्यवहार उपेक्षापूर्ण हो जाता है, जैसे प्रकृति के साथ। कवि के शब्दों में, "आज भी अनेक स्थलों एवं अवसरों पर बेटियाँ भेदभाव का शिकार होती रहती हैं। इसलिए मनमानस में यह विचार आया कि क्यों न ऐसी कविता रची जाये जो कन्या और

Edit with WPS Office

पानी, दोनों को साथ जोड़े और उनके प्रति हर हृदय को और संवेदनशील करते हुए समस्त सामाजिक और सामसिक पर्यावरण को पर्यावरण को बेहतर बनायें। इसी विनम्र प्रयास का प्रतिफल है यह कविता।" मानवीय संवेदनाओं से ओतप्रोत यह कविता एक साथ नारी विमर्श और पर्यावरणीय चेतना को स्पर्श करती है।

कविता का भावार्थ :

कवि प्रेम रंजन अनिमेष ने 'बेटी' कविता में स्त्री के जीवन-विकास और अस्तित्व की तुलना जल (पानी) के विभिन्न रूपों व उसके स्तरों से की है:

शैशवावस्था और चंचलता:

बचपन में जब लड़की नन्हीं बच्ची होती है, तो उसके जीवन में जल केवल एड़ियों तक होता है। वह चंचल, चपल होकर नाचती और फिसलती रहती है। यह उसके उन्मुक्त और अल्हड़ बचपन का प्रतीक है।

किशोरावस्था और सामाजिक मर्यादाएँ:

जैसे-जैसे वह बड़ी होती है, पानी घुटनों और कमर तक पहुँचने लगता है, जिससे उसकी चाल बँधने लगती है। अल्हड़ और सहमी किशोरावस्था में सामाजिक बंधन और मर्यादाएँ उसके स्वाभाविक प्रवाह को नियंत्रित करने लगते हैं।

यौवन, आकांक्षाएँ और भावुकता:

किशोरावस्था से युवावस्था की ओर बढ़ते हुए पानी होठों, गले और छाती तक उमड़ता है। यह उसके जीवन में तृप्ति, आंतरिक उफान और आकांक्षाओं का स्पर्श कराता है। धीरे-धीरे यह जल आँखों तक आकर टिक जाता है—जो उसकी संवेदनशीलता, सुख-दुःख और आंसुओं का रूप ले लेता है।

संयम और जीवन-संतुलन का संदेश:

कवि यहाँ आत्म-संयम की सीख देते हैं कि भावनाओं या पानी को इतना अधिक भी मत बहाओ कि सब कुछ बह जाए और न ही इतना रोको कि व्यक्ति स्वयं ही उसमें डूब जाए। ईश्वर ने स्त्री के शरीर में अनेक स्वर और दिशाएँ दी हैं, जहाँ से जीवन 'पानीरू' बनकर बहता है—कभी रक्त के रूप में, कभी श्रम के पसीने (स्वेद) के रूप में, कभी मातृत्व के दूध के रूप में, तो कभी आँखों के आँसू और ओस के रूप में।

त्याग, सहनशीलता और सृष्टि की रक्षा:

स्त्री अपने आँचल (पल्लू की कोर) से जल को बाँधकर रखती है, पलकों को झुकाकर और दाँतों में दबाकर अपनी मर्यादा व सम्मान (पानी) की रक्षा करती है। तमाम तूफ़ानों और प्रतिकूल हवाओं के बीच वह सबका 'पानी' (लाज/सम्मान) बचाए रखती है। कवि कहते हैं कि जिस प्रकार भूमिगत नदियाँ अंदर ही अंदर मिलकर पृथ्वी को जल-प्रलय से बचाती हैं, उसी प्रकार स्त्री के भीतर का मौन त्याग और सहनशीलता ही इस संसार, पहाड़ों और लहलहाती फसलों के जीवन का आधार है। स्त्री के इसी सृजनात्मक और कल्याणकारी रूप के आगे पूरी दुनिया जल-कलश की भाँति नतमस्तक होकर रखी है।

8. **एक वृक्ष की हत्या : कुँवर नारायण**

कवि परिचय :

जन्म: कुँवर नारायण का जन्म उत्तर प्रदेश के फ़ैज़ाबाद में 19 सितम्बर 1927 को हुआ।

Edit with WPS Office

शिक्षा: उन्होंने इंटर तक की पढ़ाई के बाद 1951 में लखनऊ विश्वविद्यालय से अंग्रेज़ी में एम.ए. तक पढ़ाई की।

काव्य-संग्रह: उनके 'चक्रव्यूह', 'तीसरा सप्तक', 'परिवेश : हम तुम', 'अपने सामने', 'कोई दूसरा नहीं', 'इन दिनों', 'हाशिये के बहाने', 'कविता के बहाने' आदि चर्चित काव्य-संग्रह हैं।

काव्य विशेषताएँ: कुँवर नारायण नयी कविता आन्दोलन से जुड़े प्रमुख कवि थे। उनकी कविताओं में दर्शन और काव्य का अद्भुत मेल दिखाई देता है। उनकी कविताओं में मानवीय अनुभवों को बड़ी गहराई से व्यक्त किया गया।

सम्मान एवं पुरस्कार: उन्हें अपने साहित्यिक योगदान के लिए 'ज्ञानपीठ पुरस्कार', 'साहित्य अकादमी' पुरस्कार, 'व्यास सम्मान', 'प्रेमचन्द पुरस्कार', 'शलाका सम्मान', 'राष्ट्रीय कबीर सम्मान' तथा 2009 में 'पद्म भूषण' सम्मान से सम्मानित किया गया।

मृत्यु: उनकी मृत्यु 15 नवम्बर 2017 को हुई।

कविता का सार :

प्रस्तुत कविता 'एक वृक्ष की हत्या' में कवि कुँवर नारायण जी ने एक वृक्ष के माध्यम से पर्यावरण, मनुष्य और सभ्यता के विनाश की अन्तरव्यथा का मार्मिक चित्रण किया है। कविता की मूल संवेदना पर्यावरण संरक्षण, मानवीय संवेदनशीलता और प्राचीनता के प्रति आदर है। इसमें एक वृक्ष को काटने की घटना के माध्यम से पर्यावरण और मनुष्य के बीच गहरे सम्बन्धों पर प्रकाश डाला गया है। वृक्ष को बूढ़े चौकीदार के रूप में चित्रित करना प्राचीनता और स्थिरता का प्रतीक है। कवि के मन में प्राचीनता के प्रति आदर भाव होने के कारण वृक्ष काटने पर वह बहुत दुखी होता है। मनुष्य को प्रकृति के प्रति बहुत ही संवेदनशील होना चाहिए।

कवि कहते हैं कि वह बूढ़ा वृक्ष जो अपना हरापन खो चुका था। डाले सूख गयी थी, पत्ते झड़ गये थे लेकिन विषम परिस्थितियों में भी वह पेड़ निर्भीक होकर एक बहादुर सैनिक के समान खड़ा रहता था। वह बूढ़ा वृक्ष गर्मी, सर्दी तथा तूफ़ान और बरसात से हमेशा एक खाकी वर्दी वाले चौकीदार की तरह पर्यावरण और मानवीय सभ्यता की रक्षा करता है।

कवि कहते हैं कि घर को लुटेरों से, शहर को हथियारों से और देश को दुश्मनों से बचाना हमारा कर्तव्य है। सबसे पहले हमें वृक्ष, जंगल और प्रकृति पर्यावरण को बचाना होगा, क्योंकि घर, शहर तथा देश तभी सुरक्षित, सुजलाम और सुफलाम रह सकता है जब वृक्षों की रक्षा होगी।

'एक वृक्ष की हत्या' कविता मनुष्य को प्रकृति के प्रति अपने कर्तव्यों की याद दिलाते हुए स्वार्थ में अन्धा होकर पर्यावरण को नुकसान पहुँचाने से रोकती है। हमें नदियों को नाला बनने से, हवा को धुआँ बनने से तथा खाने को ज़हर बनने से बचाना होगा। अन्यथा सम्पूर्ण मानवीय जीवन ख़तरे की गिरफ़्त में आ जायेगा। केवल इतना ही नहीं तो जंगल को मरुस्थल तथा मनुष्य को जंगल होने से बचाना होगा, क्योंकि अगर पेड़ पौधों की रक्षा नहीं होगी तो मानव सभ्यता भी नहीं बचेगी।

इसलिए यह कविता एक चेतावनी भी देती है कि अगर मनुष्य पर्यावरण को नुकसान पहुँचाना जारी रखता है तो उसे आने वाले काल में गम्भीर-से-गम्भीर परिणामों का सामना करना पड़ेगा। अतः एक वृक्ष की हत्या कविता के माध्यम से कवि कुँवर नारायण हमें पर्यावरण के प्रति अपनी ज़िम्मेदारी का एहसास करते हुए प्रकृति के साथ सद्भाव रखने की सीख देते हैं।

कविता का भावार्थ :

वृक्ष चौकीदार के रूप में :

"अबकी घर लौटा तो देखा वह नहीं था—

वही बूढ़ा चौकीदार वृक्ष

Edit with WPS Office

जो हमेशा मिलता था घर के दरवाज़े पर तैनात। ... अपनी ख़ाकी वर्दी में"

भावार्थ: कवि जब लंबे समय बाद अपने घर लौटते हैं, तो उन्हें घर के द्वार पर हमेशा प्रहरी (चौकीदार) की तरह तैनात रहने वाला पुराना वृक्ष दिखाई नहीं देता। उस वृक्ष की छाल पुराने सूखे चमड़े जैसी कठोर थी। उसका तना झुर्रियोंदार, खुरदुरा और धूल-मिट्टी से मैला-कुचैला दिखता था। उसकी एक सूखी डाल बंदूक (राइफ़िल) के समान प्रतीत होती थी तथा सिर पर पत्तों और फूलों से सजी टहनियाँ पगड़ी जैसी लगती थीं। जड़ों का फैलाव फटे-पुराने जूते जैसा था, जो ज़मीन पर दृढ़ता से जमा हुआ था। चाहे तेज़ धूप हो, बारिश हो, गर्मी हो या कड़ाके की सर्दी, वह बूढ़ा पेड़ हमेशा मुस्तैद और सजग होकर अपनी खाकी छाल रूपी वर्दी में पहरेदारी करता रहता था।

कवि और वृक्ष का आत्मीय संवाद :

"दूर से ही ललकारता, 'कौन?'

मैं जवाब देता, 'दोस्त!'

और पल भर को बैठ जाता

उसकी ठण्डी छाँव में"

भावार्थ: जब भी कवि घर लौटते, तो वृक्ष सरसराहट की आवाज़ से जैसे किसी सतर्क पहरेदार की तरह पूछता कि "कौन?"। कवि आत्मीयता से उत्तर देते—"दोस्त!"। इस प्रकार मनुष्य और प्रकृति के बीच का गहरा मित्रवत संबंध प्रकट होता है। कवि कुछ क्षण शांति और सुकून पाने के लिए उस वृक्ष की शीतल छाया में बैठ जाते थे।

संभावित खतरों के प्रति अंदेशा :

"दरअसल, शुरू से ही था हमारे अन्देशों में

कहीं एक जानी दुश्मन

कि घर को बचाना है लुटेरों से

शहर को बचाना है नादिरों से

देश को बचाना है देश के दुश्मनों से"

भावार्थ: कवि को पहले से ही इस बात का अंदेशा था कि कोई न कोई ऐसा शत्रु मौजूद है जो हमारी धरोहर और सुरक्षा को नुकसान पहुँचा सकता है। कवि चेताते हैं कि जिस प्रकार घर को लुटेरों से, शहर को नादिर शाह जैसे क्रूर हमलावरों (नादिरों) से और राष्ट्र को देशद्रोही दुश्मनों से बचाना आवश्यक होता है, उसी प्रकार पर्यावरण की रक्षा भी हमारे अस्तित्व के लिए अनिवार्य है।

सभ्यता और पर्यावरण का संकट :

"बचाना है—

नदियों को नाला हो जाने से

हवा को धुआँ हो जाने से

खाने को ज़हर हो जाने से :

Edit with WPS Office

बचाना है—जंगल को मरुस्थल हो जाने से,

बचाना है—मनुष्य को जंगल हो जाने से।"

भावार्थ: कवि अंत में एक अत्यंत गंभीर चेतावनी देते हैं कि अंधाधुंध औद्योगीकरण और दोहन से हमें अपनी प्राकृतिक संपदा को बचाना होगा। हमें नदियों को दूषित होकर नाला बनने से बचाना है, वायु को प्रदूषण का धुआँ बनने से रोकना है और खाद्य पदार्थों को रासायनिक ज़हर बनने से बचाना है। यदि पेड़ कटते रहे तो हरे-भरे जंगल रेगिस्तान (मरुस्थल) में बदल जाएँगे। इसके साथ ही, मानवीय संवेदनाओं के समाप्त होने से मनुष्य को 'जंगली' (अमानवीय व क्रूर) बनने से बचाना होगा।

9. गंगा-स्नान : ज्ञानेन्द्रपति

कवि परिचय :

ज्ञानेन्द्रपति का जन्म 1 जनवरी 1950 को ग्राम पथरगामा, झारखण्ड में हुआ। कविता के क्षेत्र में चर्चित कवि ज्ञानेन्द्रपति को वर्ष 2006 में 'संशयात्मा' शीर्षक कविता संग्रह पर साहित्य अकादेमी पुरस्कार के अलावा पहल सम्मान, बनारसीप्रसाद भोजपुरी सम्मान व शमशेर सम्मान सहित अनेक प्रतिष्ठित सम्मान और पुरस्कार से विभूषित ज्ञानेन्द्रपति की कुछ प्रमुख कृतियाँ- आँख हाथ बनते हुए, शब्द लिखने के लिए ही यह कागज बना है, गंगातट, संशयात्मा, भिनसार, पढ़ते-गढ़ते (कथेतर गद्य), कवि ने कहा (कविता संचयन) प्रकाशित हो चुकी हैं।

कविता का सार :

'गंगा' भारत का संस्कार है, वह भारतीय जीवन के रग-रग में व्याप्त है। उस गंगा नदी के प्रदूषण का मतलब हमारे संस्कार का प्रदूषण है। यहाँ गंगा नदी ही नहीं, समस्त नदियाँ प्रदूषण की भयानक शिकार बन रही हैं। भारतीय नदियों को अपने जीवन में पवित्र स्थान दे रहे हैं। भारतीय विश्वास के अनुसार गंगा में स्नान करने से मोक्ष मिलता है। हिमालय पर्वत से निकलने वाली यह नदी स्वास्थ्यदायक अनेक धातु-लवणों के साथ कई प्रकार की जड़ी-बूटियों से होकर बहती जा रही है। यहाँ एक बूढ़ी माँ गंगा की पूरी पवित्रता को आत्मसात कर नहा रही है। लेकिन कवि गंगा की आज की स्थिति का बयान कर गंगा के प्रति और भारत की सारी नदियों के प्रति अपना प्यार एवं सम्मान प्रकट करते हुए भारतीय संस्कृति में नदियों का स्थान भी प्रकट करते हैं।

'गंगातट' पुस्तक की पहली कविता 'गंगा-स्नान' में परम्परा और संस्कारों के प्रति निष्ठा रखने वाली पुरानी पीढ़ी के प्रतिनिधि के रूप में बूढ़ी मैया को प्रस्तुत किया है। पुरानी पीढ़ी के लिए गंगा केवल एक नदी नहीं है, वह उनके संस्कारों का प्रतीक है, गंगा के साथ जुड़ी उनकी कई आस्थाएँ हैं। उस पूज्य नदी के दर्शन-मात्र से मुक्ति का द्वार खुलता है। किन्तु हमारे लिए मुक्ति व मोक्ष का द्वार खोलते-खोलते नदी मर जाती है। कवि के शब्दों में 'तुम्हारी सारी नदियाँ अपवित्र हो गयी है-विषाक्त'।

हमने भौतिक तरक्की कर ली है। बैंक खाते भर लिए हैं लेकिन अपने प्राणों-संस्कारों की आधार नदियों को नष्ट कर दिया है। पिछली पीढ़ी सम्पूर्ण आस्था के साथ गंगा स्नान कर रही है किन्तु आज की पीढ़ी ने क्या किया- 'नगर के नालों की गन्दगी' सारी गंगा में ही उगलदी।

यह कविता हमारी दोहरी मानसिकता पर भी चोट करती है। एक तरफ हम नदियों को माँ, पवित्र तथा मुक्तिदात्री मानकर पूजते हैं, दूसरी तरफ नाली-नालों से लेकर पूजा-पाठ के कचरे का भी उसी में विसर्जन कर देते हैं। विकास इस प्रकार हो रहा है कि औद्योगिक कचरा नदियों को विषाक्त बना रहा है। प्रस्तुत कविता हमारे विकास के मॉडल की वास्तविकता बयां करती है। ज्ञानेन्द्रपति 'गंगा-स्नान' कविता के द्वारा हमें हमारी जड़ों से जोड़ते हैं।

10. नदी पहाड़ और बाजार : जसिन्ता केरकेट्टा

कवयित्री परिचय :

Edit with WPS Office

प्रसिद्ध और प्रतिबद्ध आदिवासी कवयित्री, पत्रकार और सामाजिक कार्यकर्ता जसिन्ता केरकेट्टा का जन्म ३ अगस्त 1983 को झारखण्ड के पश्चिमी सिंहभूम ज़िले में खुदापोष गाँव में हुआ। पिता जयप्रकाश केरकेट्टा एक मैराथन एथलीट थे जो चर्च के स्कूल में गार्ड के रूप में और अस्थायी रूप से पुलिस बल में काम किया करते थे। उनकी माता का नाम पुष्पा अनिमा केरकेट्टा है। उनका परिवार उराँव जनजाति से है। झारखण्ड के सन्थाल परगना डिवीजन के अलग-अलग स्कूल और बिहार के चम्पारण ज़िले के बेतिया में जसिन्ता की पढ़ाई हुई। वह तेरह साल की उम्र में मनोहरपुर के मिशनरी बोर्डिंग स्कूल में गयीं। सन् 2006 में सेंट जेवियर्स कॉलेज, रांची से मास कम्युनिकेशन और वीडियो प्रोडक्शन में डिग्री प्राप्त की। सन् 2016 में रांची विश्वविद्यालय से मास कम्युनिकेशन में मास्टर डिग्री पूरी की।

स्थानीय पत्रकारों द्वारा दुर्लक्षित तीव्र हिंसा को देखने के बाद जसिन्ता ने पत्रकार बनने का फैसला किया। सन् 2010 से 2013 तक हिन्दी दैनिक 'दैनिक जागरण' के रांची संस्करण में रिपोर्टर के रूप में कार्य किया। सन् 2019 से वह भारतीय ऑनलाइन समाचार 'पोर्टल द वायर' के हिन्दी संस्करण और दैनिक समाचार पत्र 'प्रभात खबर' के रांची संस्करण के लिए परामर्शदाता रही हैं। पत्रकारिता के साथ-साथ वह एक सामाजिक कार्यकर्ता भी हैं। अपने समाज की लड़कियों के संघर्ष को उन्होंने अपना संघर्ष बना लिया। यही संघर्ष आगे चलकर उनका हथियार हुआ। यही जीवन संघर्ष उनकी कविता में सर्वत्र दिखाई देता है। सन् 2015 से वे झारखण्ड के सिमडेगा और खूँटी ज़िलों के आदिवासी लड़कियों की शिक्षा के लिए कुचीना फाउंडेशन, कोलकाता के सहयोग से काम कर रही हैं।

केरकेट्टा जी ने 'झारखण्ड के पाँच ज़िलों में आदिवासी और खनन' शीर्षक से एक अध्ययन किया है। सन् 2014 में उन्हें बैंकॉक में 'एशिया इंडीजीनस पीपुल्स पैक्ट' द्वारा पत्रकारिता कार्य 'इंडीजीनस वाइस ऑफ एशिया' के लिए सम्मानित किया गया। उनकी कविताओं के लिए नागरिक समाज संगठन, झारखण्ड इंडीजीनस पीपुल्स की ओर से पुरस्कृत किया गया। उन्हें छोटा नागपुर सांस्कृतिक संघ की ओर से प्रेरणा सम्मान भी मिला। वाराणसी में रवि शंकर उपाध्याय स्मृति संस्थान द्वारा रवि शंकर उपाध्याय स्मृति युवा कविता पुरस्कार से इन्हें सम्मानित किया गया। सन् 2017 में दैनिक 'प्रभात खबर' ने उन्हें 'अपराजिता' पुरस्कार से सम्मानित किया। सन् 2019 में उन्हें भारतीय उद्योग परिसंघ (सी.आई.आई.) का स्थापना महिला उदाहरण मान्यता पुरस्कार मिला। सन् 2022 में फोर्ब्स इंडिया द्वारा उन्हें भारत की शीर्ष बीस स्वनिर्मित महिलाओं में से एक नामित किया गया। नवम्बर 2023 में उन्होंने उनके 'ईश्वर और बाजार' कविता-संग्रह के लिए 'इंडिया टुडे' द्वारा दिया जाने वाला 'आजतक साहित्य जागृति उद्यमी प्रतिभा' सम्मान स्वीकारने से इनकार कर दिया। साथ ही सितम्बर, 2024 में उन्होंने उनके 'जिरहुल' कविता-संग्रह को दिया जाने वाला 'रूम टू रीड यंग ऑथर' अवार्ड को भी अस्वीकार कर दिया।

सन् 2016 में उनकी पहली किताब आदिवाणी प्रकाशन, कोलकाता से हिन्दी-अंग्रेजी में प्रकाशित की गयी। इसके बाद यही किताब जर्मन प्रकाशन द्वारा हिन्दी-जर्मन में प्रकाशित हुई। उनके अंगोर कविता-संग्रह का इतालवी अनुवाद 'ब्राचे' को इटली के मिराजी प्रकाशन ने प्रकाशित किया। भारतीय ज्ञानपीठ ने उनके 'जड़ों की जमीन' काव्य-संग्रह को हिन्दी-अंग्रेजी और हिन्दी-जर्मन में एक साथ प्रकाशित किया। उनकी कविताओं के देशी-विदेशी भाषाओं में अनुवाद हुए। काफोस्करी यूनिवर्सिटी, मिलान यूनिवर्सिटी, तुरीनो यूनिवर्सिटी और ज्युरिख यूनिवर्सिटी में उन्होंने अपनी कविताओं पर संवाद किया। दृश्य अंगकोर, जड़ों की भूमि', 'ईश्वर और बाजार', 'जसिन्ता की डायरी', 'प्रेम में पेड़ होना', 'जिरहुल' आदि उनकी प्रकाशित पुस्तकें हैं।

कविता का सार :

जसिन्ता केरकेट्टा का संघर्ष बहुमुखी है। इसी संघर्ष के ही दिनों में उन्होंने कविता लिखना शुरू किया। मानो यही संघर्ष उन्हें कविता लिखने के लिए प्रेरित करता रहा है। यही जीवन संघर्ष उनका साहित्यिक हथियार बनकर कविताओं में सर्वत्र व्याप्त है। उनकी कविता 'नदी, पहाड़ और बाज़ार' की मूल संवेदना विस्थापन, प्रस्तुति और पर्यावरण का क्षरण, प्रदूषण और आधुनिकता के दबाव में पारम्परिक जीवन शैली के नुकसान पर प्रकाश डालती है। मनुष्य द्वारा प्रकृति और पर्यावरण के होते विनाश पर हमें गम्भीरता से सोचने के लिए मजबूर करती है। कविता एक गाँव से बाज़ार की यात्रा का वर्णन है। जिसमें एक स्त्री अपनी छोटी पीढ़ी को प्रकृति के बदलते रूप जैसे सुखी नदी, पहाड़ों का ग़ायब होना और क़ब्रिस्तान में बदलता हुआ खेत-खलिहान दिखाती है। यहाँ गाँव से बाज़ार की यात्रा विस्थापन का प्रतीक है। नदी का निर्मल जल, पहाड़ों से आने वाली शुद्ध हवा अब केवल यादों में रह गये हैं। आज का मनुष्य शुद्ध जल और शुद्ध हवा के लिए संघर्ष करता दिखाई दे रहा है। नदी का सुखना


Edit with WPS Office

और पहाड़ों का ग़ायब होना आधुनिक मनुष्य द्वारा प्रकृति और पर्यावरण के नुकसान को दर्शाता है, जो उसके ही हाथ से उसके ही पैरों पर कुल्हाड़ी मारने जैसा है। बाज़ार की दुकान में 'नमी' और 'मिट्टी' जैसे प्राकृतिक वस्तुओं को 'डिब्बाबन्द' और 'महँगी' बताना यह आधुनिकता के दबाव में प्रकृति और पर्यावरण के प्रति बदलती वर्तमान मानव की मानसिकता की ओर इशारा करता है। खेत-खलिहान की जगह पर क़ब्रिस्तान पारम्परिक जीवन शैली और सांस्कृतिक मूल्यों के अधःपतन का प्रतीक है। नन्ही पीढ़ी के माध्यम से आने वाली पीढ़ी के बोझ की चिन्ता कवयित्री को यहाँ सताती है।

प्रस्तुत कविता पर्यावरण क्षरण और प्रकृति के वस्तुकरण की एक शक्तिशाली आलोचना के साथ-साथ बाज़ार में बेचे जा रहे अमूर्त प्राकृतिक तत्त्वों का विरोधाभास बयाँ करती है। अतः कवयित्री हमें पर्यावरण पर मानवीय क्रियाओं के दुष्परिणामों से अवगत करते हुए एक तरह से प्रतिरोध का भी आह्वान करती है।

कविता का भावार्थ :

विस्थापन और प्रकृति का क्षरण:

कवयित्री अपनी नई पीढ़ी (नन्ही बच्ची) की उँगली थामकर गाँव से बाज़ार की ओर जाती हैं। रास्ते में वे देखती हैं कि जहाँ कभी कल-कल बहती नदी हुआ करती थी, आज वहाँ केवल एक सूखी पगडण्डी बची है। ज़मीन पर पड़ी गहरी दरारें इस बात की गवाही देती हैं कि कभी यहाँ ऊँचे पहाड़ हुआ करते थे, जो विकास की भेंट चढ़कर विलुप्त हो चुके हैं।

सांस्कृतिक विनाश एवं भय:

दूर तक फैला भयावह क़ब्रिस्तान देखकर बच्ची सहम जाती है। कवयित्री उसे बताती हैं कि जिन ज़मीनों पर कभी उनके पूर्वजों के लहलहाते खेत-खलिहान थे, वे अब उजड़कर केवल मृत अवशेषों (क़ब्रिस्तान) में तब्दील हो चुके हैं। यह पारंपरिक आदिवासी जीवन शैली और प्राकृतिक संपदा के संपूर्ण विनाश का मार्मिक दृश्य है।

प्रकृति का बाज़ारीकरण (वस्तुकरण):

बाज़ार पहुँचने पर जब दुकानदार पूछता है कि क्या चाहिए, तब कवयित्री बारिश, गीली मिट्टी, बोतल में नदी, डिब्बाबंद पहाड़ और दीवार पर टँगी प्रकृति की माँग करती हैं। यह आधुनिक पूँजीवादी व्यवस्था पर गहरा व्यंग्य है, जिसने मुफ़्त और जीवनदायी प्राकृतिक तत्त्वों को भी बिक्री की वस्तु (कमोडिटी) बना दिया है।

अस्तित्व का संकट:

दुकानदार द्वारा यह कहना कि नमी बहुत महँगी है और दूसरे ग्रह से मँगवाई गई है, मानवीय अस्तित्व के निकट भविष्य के भीषण संकट को उजागर करता है। अंत में, जब कवयित्री भुगतान के लिए अपने आँचल की गाँठ टटोलती हैं, तो उन्हें नोट या सिक्कों की जगह अपना मुड़ा हुआ 'पूरा वजूद' मिलता है। इसका अर्थ यह है कि इस अंधी विकासवादी दौड़ और बाज़ार व्यवस्था में मनुष्य ने प्रकृति को खोकर स्वयं अपना संपूर्ण अस्तित्व ही दाँव पर लगा दिया है।

दिए गए पृष्ठों के आधार पर विस्तृत अध्ययन नोट्स नीचे तैयार किए गए हैं:

11. **'पुत्रोऽहंपृथिव्या' : डॉ. हूबनाथ पाण्डेय**

कवि परिचय :

जन्म: 23 मई 1964 को वाराणसी में।

शिक्षा एवं अध्यापन:

शिक्षा एवं अध्यापन मुम्बई में हुआ।

Edit with WPS Office

बाईस वर्षों तक इस्माइल यूसुफ शासकीय महाविद्यालय में तथा ग्यारह वर्ष मुम्बई विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में अध्यापन किया।

शोध एवं प्रोजेक्ट:

कुबेरनाथ राय के ललित निबन्धों पर पी-एच.डी शोधकार्य।

'समान्तर सिनेमा' पर विश्वविद्यालय अनुदान आयोग (UGC) के आर्थिक सहयोग से मेजर रिसर्च प्रोजेक्ट सम्पन्न।

प्रमुख कृतियाँ:

हिन्दी काव्य-संग्रह: चार काव्य-संग्रह प्रकाशित— 'कौए', 'लोअर परेल', 'मिट्टी' और 'अकाल'।

अनुवाद: उर्दू में कविताओं का अनुवाद 'सराब' प्रकाशित। बाङ्ला में पच्चीस कविताओं का अनूदित-संग्रह प्रकाशित।

इतिहास, सिनेमा, साहित्य तथा संस्कृति पर पच्चीस से अधिक पुस्तकों का लेखन, सम्पादन एवं अनुवाद प्रकाशित।

सम्प्रति दायित्व:

अनभै शोध एवं साहित्य की त्रैमासिक पत्रिका युगीन काव्य, 'काव्य त्रैमासिक' का सम्पादन।

मुम्बई विश्वविद्यालय के रिसर्च जर्नल में प्रधान सम्पादक।

दो काव्य-संग्रह प्रकाशनाधीन।

कविता का सार :

"भारतीय परम्परा में वसुधैव कुटुम्बकम् कहा तो जाता है किन्तु फिलहाल या तो हम इसका अर्थ भूल चुके हैं या अपने स्वार्थ और लोभ दबाव में इसकी उपेक्षा कर रहे हैं।

यह वसुधा मेरा परिवार है अर्थात् इस धरती पर जो कुछ भी चर-अचर जगत विद्यमान है। वह मेरा परिवार है और मुझे उसकी वैसी ही चिन्ता या देखभाल करनी चाहिए जैसी हम अपने जैविक परिवार की करते हैं या करना चाहते हैं।

गांधी जी कहा करते थे कि 'धरती अपनी सभी सन्तानों का पेट भरने में समर्थ है किन्तु किसी एक के लालच का पेट भरने के लिए एक पृथ्वी कम है।'

दुर्भाग्यवश मानवजाति आज लोभ, स्वार्थ, अहंकार और परिग्रह की उस पराकाष्ठा पर आ पहुँचा है कि पूरी पृथ्वी संकट में पड़ गयी है। दुनिया भर की सरकारें धरती के सारे खनिज, सारे तेल, सारे धातु और सारी निधियाँ एक साथ खींचकर निकाल लेना चाहते हैं जिससे वे समृद्ध हो सकें। भले इस प्रक्रिया में पृथ्वी का विनाश हो जाये तो भी।

इस कविता में महाभारत के मिथक के सहारे धरती के उन धृतराष्ट्रों को चेतावनी देने का प्रयास किया गया है जो लालच में अन्धे होकर पृथ्वी के पर्यावरण का विनाश कर रहे हैं।

जब यह धरती हम सबकी माँ है तो माँ की सुरक्षा का दायित्व भी हम सबका है।"

कविता का भावार्थ :

कविता 'पुत्रोऽहंपृथिव्या' (अर्थात् 'मैं पृथ्वी का पुत्र हूँ') में कवि ने धरती माता के दर्द, विवशता, शोषण और अंततः उसके संभावित रौद्र रूप को महाभारत और पौराणिक प्रतीकों के माध्यम से व्यक्त किया है:


Edit with WPS Office

धरती की विवशता एवं संतानों का अनाचार:

धरती स्वयं को गांधारी के समान विवश पाती है। वह कहती है कि उसने अपनी आँखों पर पट्टी बाँध ली है क्योंकि एक माँ होकर वह अपने ही पुत्रों द्वारा किए जा रहे अनाचार को नहीं देख सकती। जिस तरह गांधारी अपने सौ पुत्रों के कुकर्मों और विनाश को देखने में असमर्थ थी, उसी प्रकार धरती अपनी संतानों के विनाशकारी मार्ग पर घिसटने को विवश है।

पोषणकर्ता का ही शोषण:

धरती की ही कोख से मनुष्य का जन्म हुआ, उसकी काया विकसित हुई और उसी के रक्त-मांस (खनिज, जल, अन्न) से मानव पोषित हुआ। परंतु आज वही मनुष्य 'पोषक' न रहकर 'शोषक' बन चुका है। वह पहाड़ों को खोद रहा है, नदियों-झरनों रूपी गहनों को नोच-नोचकर प्रकृति को नग्न (क्षत-विक्षत) कर रहा है।

प्रकृति का समतावादी रूप बनाम मानव का लोभ:

धरती ने सदियों से सारे यत्न और निधियाँ इसलिए संजोकर रखी थीं ताकि उसकी कोई भी संतान भूखी-प्यासी न मरे। उसके लिए सूक्ष्म कीट, दूर्वादल (घास), विशाल वटवृक्ष, नभचर, जलचर और मनुष्य सभी एक समान हैं। किंतु आज मनुष्य रूपी 'धृतराष्ट्र के पुत्र' (कौरव) इतने दृष्टिहीन और लालची हो गए हैं कि वे सारी संपदा अकेले ही हड़प लेना चाहते हैं।

चीरहरण और नारी-प्रतीकों का दर्द:

कवि ने पर्यावरण दोहन की तुलना द्रौपदी के चीरहरण से की है। संतानों द्वारा ही धरती रूपी माता के वस्त्र (हरियाली, वनस्पति) नोचे जा रहे हैं। सत्ता और समाज मौन होकर इस विनाश को देख रहे हैं। धरती पूछती है कि वह याज्ञसेनी (द्रौपदी) की तरह कब तक अपमान सहे, सीता की तरह कब तक अग्निपरीक्षा दे, अथवा अहल्या बनकर कब तक उद्धार की प्रतीक्षा करे?

विनाश की चेतावनी (नेत्र रुद्र के जागेंगे):

धरती चेतावनी देती है कि यदि मनुष्य का यह अंधा लोभ नहीं रुका, तो एक दिन वह अपनी सहनशीलता की पट्टी उतार फेंकेगी। जिस दिन प्रकृति का रौद्र रूप जागेगा, उस दिन एक और कुरुक्षेत्र का निर्माण होगा। तब धरती लाशों से पट जाएगी, सर्वत्र आग लगेगी और मानव द्वारा किया गया संहार अंततः उसी के विनाश का कारण बनेगा। धरती दुखी होकर सोचती है कि वह अपने अहंकारी और महामूढ़ पुत्रों को इस अवश्यम्भावी प्रलय से कैसे बचाए।

प्रश्न :

'धरती' कविता के भावार्थ को स्पष्ट करते हुए यह समझाइए कि कवि नागार्जुन ने आधुनिक मशीनी सभ्यता, पर्यावरण-शोषण और युद्धोन्मादी शक्तियों पर किस प्रकार प्रहार किया है?

'बादल क्या है' कविता का संपूर्ण भावार्थ अपने शब्दों में स्पष्ट करते हुए बताइए कि कवि राजेश जोशी ने बादल के माध्यम से प्रकृति और मानवीय संवेदनाओं के किस अंतर्संबंध को रेखांकित किया है ?

‘पानी की प्रार्थना’ कविता के आधार पर जल-प्रदूषण, पारिस्थितिक असंतुलन और वर्तमान बाज़ारवादी व्यवस्था पर कवि केदारनाथ सिंह के विचारों की सोदाहरण समीक्षा कीजिए।

“समय ही कुछ ऐसा है कि पानी नदी में हो या किसी चेहरे पर, झाँककर देखो तो तल में कचरा कहीं दिख ही जाता है!”— प्रस्तुत पंक्तियों का संदर्भ स्पष्ट करते हुए 'पानी की प्रार्थना' कविता का मूल भावार्थ अपने शब्दों में लिखिए।

'उस दिन का जंगल' कविता के आधार पर लीलाधर जगूड़ी के पर्यावरण और मानवीय संबंधों के दृष्टिकोण को स्पष्ट कीजिए।

Edit with WPS Office

"गंगा को प्यार" कविता के आधार पर स्पष्ट कीजिए कि कवि अरुण कमल ने गंगा और भारतीय जन-जीवन के आंतरिक संबंधों का चित्रण करते हुए पर्यावरण प्रदूषण की वर्तमान विभीषिका पर किस प्रकार चिंता व्यक्त की है?

'इक्कीसवीं शताब्दी की ओर' कविता आधुनिक विकास की अंधी दौड़, बाज़ारवाद और सांप्रदायिकता के यथार्थ को उजागर करते हुए भी मनुष्य के श्रम और आशावाद को रेखांकित करती है। सविस्तार समीक्षा कीजिए।

'भारत की ऋतुएँ' कविता के आधार पर भारत की छहों ऋतुओं की विशेषताओं का सविस्तार वर्णन कीजिए।

कवयित्री साईमीरा जोशी के साहित्यिक योगदान पर प्रकाश डालते हुए 'भारत की ऋतुएँ' कविता के मुख्य संदेश को स्पष्ट कीजिए।

"प्रेम रंजन अनिमेष द्वारा रचित 'बेटी' कविता नारी विमर्श और पर्यावरणीय चेतना के अंतर्संबंधों को किस प्रकार उजागर करती है? कविता के आधार पर विस्तारपूर्वक समझाइए।"

वृक्ष की हत्या' कविता के आधार पर बूढ़े वृक्ष के स्वरूप (व्यक्तित्व) का सजीव चित्रण कीजिए। कवि ने उसे 'चौकीदार' क्यों कहा है ?

"बचाना है जंगल को मरुस्थल हो जाने से, बचाना है मनुष्य को जंगल हो जाने से"—इन पंक्तियों का आशय स्पष्ट करते हुए कविता के मूल संदेश पर प्रकाश डालिए।

'गंगा-स्नान' कविता के आधार पर पुरानी पीढ़ी की अटूट आस्था और आधुनिक पीढ़ी की संवेदनहीनता व दोहरी मानसिकता की तुलनात्मक विवेचना कीजिए।

किन्तु हमारे लिए मुक्ति व मोक्ष का द्वार खोलते-खोलते नदी मर जाती है" इस पंक्ति के आलोक में ज्ञानेन्द्रपति द्वारा प्रस्तुत वर्तमान विकास मॉडल और पर्यावरणीय संकट के भावार्थ को स्पष्ट कीजिए।

नदी, पहाड़ और बाज़ार' कविता के आधार पर प्रकृति के वस्तुकरण और पर्यावरण क्षरण की समस्या पर विस्तार से प्रकाश डालिए।

"गाँव से बाज़ार की यात्रा वस्तुतः आदिवासी समाज के विस्थापन और सांस्कृतिक मूल्यों के पतन की यात्रा है।" जसिन्ता केरकेट्टा की कविता और उसके सार के आलोक में इस कथन की सविस्तार समीक्षा कीजिए।

"कविता 'पुत्रोऽहंपृथिव्या' में कवि डॉ. हूबनाथ पाण्डेय ने आधुनिक पर्यावरण संकट को महाभारत के मिथक से किस प्रकार जोड़ा है? धरती की वेदना और मनुष्य के लोभ का विस्तृत विवेचन करते हुए स्पष्ट कीजिए।"

Edit with WPS Office

दयानंद कला महाविद्यालय, लातूर

हिंदी विभाग

बी. ए. द्वितीय वर्ष

सत्र : तृतीय (मायनर)

पेपर का नाम : "हिंदी साहित्य और पर्यावरणीय चेतना" : HHINM -1201

डॉ. मीना घुमे

Swami Ramanand Teerth Marathwada University, Nanded
Faculty of Humanities- Hindi

Under Graduate Second Year Programme, Semester III

HHINM-1201-4Cr-हिंदी साहित्य और पर्यावरणीय चेतना *(Minor)* Curriculum Details

Module No.	Unit No.	Name of Topic	Hrs. Required tocover the contents 1 Hrs.=60 M.
1.0		पर्यावरण	15
	1.1	पर्यावरण - परिभाषा और महत्व	
	1.2	पर्यावरण और प्रदूषण	
	1.3	पर्यावरण और साहित्य	
	1.4	लेख-हमारे जीवन में वनों का महत्व- कन्हैयालाल मुंशी	
2.0		कहानियाँ	15
	2.1	2.1.1 इक्कीसवीं सदी का पेड़- मृदुला गर्ग 2.1.2 विनाशदूत - मृदुला गर्ग	
	2.2	जंगलजातकम् - काशीनाथ सिंह	
	2.3	कहीं दूर जब दिन ढल जाये - बटरोही	
	2.4	2.4.1 जंगल पर विकास -हरिराम मीणा 2.4.2 नदी गायब है -एस. आर.हरनोट	
3.0		कविताएँ- भाग-1	15
	3.1	3.1.1 धरती - नागार्जुन , 3.1.2 बादल क्या है - राजेश जोशी	
	3.2	पानी की प्रार्थना - केदारनाथ सिंह	
	3.3	उस दिन का जंगल- नीलाधर जगुड़ी	
	3.4	3.4.1 गंगा को प्यार- अरुण कमल 3.4.2 इक्कीसवीं शताब्दी की ओर - अरुण कमल	
4.0		कविताएँ भाग-2	15
	4.1	4.1.1 भारत की ऋतुएँ - साईंगीरा जोशी, 4.1.2 बेटी-पेमरंजन अनिमेष	
	4.2	4.2.1 एक वृक्ष की हत्या - कुँवरनारायण, 4.2.2 गंगास्नान - शार्दूलप्रति	
	4.3	नदी, पहाड और बाजार - जसिंता केरकेट्टा	
	4.4	पुरोऽहंपृथिव्या- डॉ.हूबनाथ पाण्डेय	
		Total	60

2.0 खण्ड ख - कहानियां

मृदुला गर्ग की दो कहानियां :

1. इक्कीसवीं सदी का पेड़ -

लेखिका का परिचय :

Edit with WPS Office

मृदुला गर्ग हिंदी की एक प्रमुख लेखिका हैं, जिन्होंने उपन्यास, कहानी, नाटक और निबंधों सहित 30 से अधिक पुस्तकें लिखी हैं. उन्हें उनकी उत्कृष्ट कृति "मिलजुल मन" के लिए केंद्रीय साहित्य अकादमी पुरस्कार (2013) सहित कई प्रतिष्ठित पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है. गर्ग अपनी लीक से हटकर लेखन शैली और नारीवादी दृष्टिकोण के लिए जानी जाती हैं, जिनके कार्यों का कई भारतीय और विदेशी भाषाओं में अनुवाद हुआ है.

जीवन और शिक्षा

जन्म:25 अक्टूबर 1938, कोलकाता, पश्चिम बंगाल में हुआ.

शिक्षा:उन्होंने अर्थशास्त्र में स्नातकोत्तर की उपाधि प्राप्त की.

अध्यापन:उन्होंने 3 साल तक दिल्ली विश्वविद्यालय में अर्थशास्त्र का अध्यापन भी किया.

प्रमुख लेखन और साहित्यिक योगदान

विधाएँ : मृदुला गर्ग उपन्यास, कहानी संग्रह, नाटक और निबंध संग्रह सहित कई विधाओं में लिखती हैं.

लोकप्रियता और आलोचना:

वह हिंदी साहित्य की सबसे लोकप्रिय लेखिकाओं में से एक हैं और उन्हें अपनी आलोचनात्मक सराव्हना के लिए भी जाना जाता है.

नारीवाद : उनकी रचनाएँ नारीवाद और महिला अधिकारों पर केंद्रित हैं, जो पारंपरिक विचारों से हटकर नारी जीवन की नई दृष्टि को दर्शाती हैं.

उनके कुछ उपन्यास जैसे "चित्तकोबरा" ने पारंपरिक समाज में विवाहेत्तर संबंधों पर आधारित होने के कारण विवाद और चर्चा को जन्म दिया.

महत्वपूर्ण पुरस्कार और सम्मान :

साहित्य अकादमी पुरस्कार (2013): उपन्यास "मिलजुल मन" के लिए.

व्यास सम्मान (2004): उपन्यास "कठगुलाब" के लिए.

मध्य प्रदेश सरकार द्वारा पुरस्कृत: "उसके हिस्से की धूप" (1975) और "जादू का कालीन" (1993).

प्रसिद्ध कृतियाँ :

उपन्यास: कठगुलाब, चित्तकोबरा, उसके हिस्से की धूप, अनित्य, मैं और मैं, और मिलजुल मन.

अन्य: कहानियाँ, निबंध, नाटक, यात्रा-वृत्तांत और व्यंग्य-संग्रह भी प्रकाशित किए.

अनुवाद : मृदुला गर्ग के कई कार्यों का जर्मन, चेक, जापानी और अंग्रेज़ी सहित विभिन्न भाषाओं में अनुवाद किया गया है.

मृदुला गर्ग की 'इक्कीसवीं सदी का पेड़' एक पर्यावरणीय चेतना जगाने वाली कहानी है जो वृक्ष के नजरिए से मानव-निर्मित विनाश और प्लास्टिक के हानिकारक प्रभाव को दिखाती है. कहानी में पेड़ के दुख, अहसास और मनुष्य की एकांगी सोच पर केंद्रित है, जो पर्यावरण में घुलते ज़हर और उसके विनाशकारी परिणामों को रेखांकित करती है.

कहानी के मुख्य बिंदू :

Edit with WPS Office

वृक्ष का दृष्टिकोण: कहानी एक पेड़ के नज़रिए से बताई गई है, जो मनुष्य द्वारा किए गए अत्याचारों को सहन करता है और मानवीय सोच को समझने की कोशिश करता है.

मानव क्रूरता: मनुष्य जिस तरह से पर्यावरण का दोहन कर रहा है और पेड़-पौधों को नुकसान पहुंचा रहा है, उसका चित्रण कहानी में किया गया है.

प्लास्टिक का प्रभाव: कहानी में प्लास्टिक के उपयोग के दुष्प्रभावों पर भी प्रकाश डाला गया है, जो वृक्षों के लिए हानिकारक है.

पर्यावरणीय चेतना: यह कहानी पाठक को प्रकृति के प्रति संवेदनशील बनने और वृक्षों के महत्व को समझने के लिए प्रेरित करती है.

एकल सोच: कहानी मानव की एकांगी सोच को भी दर्शाती है, जिसके कारण प्रकृति का संतुलन बिगड़ता जा रहा है.

यह कहानी आधुनिक साहित्य में प्रकृति चित्रण की एक नई दिशा प्रस्तुत करती है, जहां लेखिका पर्यावरण संबंधी मुद्दों पर गंभीरता से बात करती है.

मृदुला गर्ग का लेखन पर्यावरण के प्रति उनकी सजगता को दर्शाता है, जिसे उनकी कई रचनाओं में देखा जा सकता है.

इक्कीसवी सदी का पेड़ : कथा-सार

मृदुला गर्ग की कहानियों में समसामयिक विमर्श की सहज कहानियाँ हैं। स्त्री-विमर्श के अतिरिक्त पर्यावरण के प्रति चिन्तन को उनके कथा-साहित्य में नैसर्गिक ढंग से देखा जा सकता है। 'इक्कीसवी सदी का पेड़' एक वैचारिक तथा संवेदनशील व पर्यावरण की समस्या से सम्बन्धित कहानी है। यूँ इसे एक वैचारिक कथांश भी कह सकते हैं। प्रस्तुत कहानी में पेड़ पर्यावरण और मनुष्य के महत्त्व को प्रस्तुत किया गया है। कहानी के प्रारम्भ में पेड़ की व्यथा-कथा बताते हुए पर्यावरण का वर्णन किया गया है। पेड़ एक जीता-जागता, सोचने-समझने वाला चरित्र है। दूर देश से आयी चिड़िया पेड़ को उस देश के विकास तथा पर्यावरण की जानकारी देती है और बताती है कि कई देशों में पेड़ों को काटा, छेड़ा और नष्ट नहीं किया जाता। सड़क हो या भवन निर्माण पेड़ों को बचाते, संरक्षित करते हुए विकासपरक कार्य किये जाते हैं। चिड़िया से ऐसी सूचनाएँ पाकर पेड़ विकास के पर्यावरणपरक मॉडल पर प्रसन्न होता है। चिड़िया से जब यह सूचना भी मिलती है कि किन्हीं जगहों पर पेड़ों को अनावश्यक काटा जा रहा है, पेड़ नष्ट हो रहे हैं तथा यहाँ तक कि चिड़ियाओं को भी मारा जा रहा है। तब पेड़ उदास होता है। और ऑक्सीजन देना भी बन्द कर देता है। साथ ही विकास का विनाशपरक मॉडल भी दिखाई देने लगता है। लोग अपने पर्यावरण को नष्ट कर रहे हैं। विकास के इस विकृत मॉडल को इक्कीसवीं सदी भी कहते हैं। जंगल काटे जा रहे हैं। जानवरों और इंसानों में फर्क करना मुश्किल होता जा रहा है। प्लास्टिक तथा प्रदूषण का बोझ पर्यावरण पर बढ़ता जा रहा है। प्रवासी पक्षी पेड़ को बताता है कि इनसान आज कैंसर या एड्स से मरने के बीच ही चुनाव कर सकता है। पेड़ भी शोर या कचरे से मरने के बीच ही चुनाव कर सकते हैं। हवा प्रदूषित हो गयी है, प्लास्टिक का ढेर बढ़ता जा रहा है।

विडम्बना यह कि तमाम प्रदूषण, शोर, बढ़ते प्लास्टिक कचरे और श्मशानी वीराने में से 'पेड़ लगाओ पर्यावरण बचाओ!' के नारे लगाये जाते हैं। यह सुनकर पेड़ हँसता है लेकिन यह हँसना विक्षिप्तता भरा है। पेड़ का हँसना हमारे समय व समाज पर तीखा व्यंग्य है।

इक्कीसवीं सदी की पहली सुबह पेड़ का हँसना गहरे विडम्बना बोध को दर्शाता है।

2. विनाशदूत

मृदुला गर्ग की "विनाश-दूत" कहानी भोपाल गैस त्रासदी पर आधारित एक रूपक है, जिसमें उन्होंने पूंजीवाद के अंधाधुंध विकास की विद्रूपता और उसके प्रकृति से युद्ध करने की प्रवृत्ति को उजागर किया है, जो अंततः पूंजीपतियों के विनाश का कारण बनती है। यह कहानी पूँजीवाद की संहारक प्रवृत्ति और मानवीय मूल्यों के ह्रास पर एक सशक्त व्यंग्य है।

Edit with WPS Office

कहानी के मुख्य बिंदु:

रूपक का प्रयोग: यह कहानी भोपाल गैस त्रासदी को एक रूपक के माध्यम से प्रस्तुत करती है, जिसमें त्रासदी की भयावहता को दर्शाने के लिए एक दैत्य रूपी स्याह बादल का चित्रण किया गया है।

पूंजीवाद पर कटाक्ष: कहानी में पूंजीपति वर्ग की विनाशकारी प्रवृत्ति को दिखाया गया है। वे अपने लाभ के लिए प्रकृति से खिलवाड़ करते हैं, जो उनके विनाश का कारण बनता है।

मानवतावादी मूल्यों की प्रतिष्ठा: लेखिका कहानी के माध्यम से सार्वजनिक मानवतावादी जीवन-मूल्यों को स्थापित करने और स्थापित करने का आग्रह करती हैं, साथ ही विश्व के शक्तिशाली देशों की स्वार्थमूलक संहारक प्रवृत्ति का विरोध करती हैं।

प्रकृति का प्रतिशोध: कहानी में दर्शाया गया है कि प्रकृति अपने अपरिहार्य प्रतिशोध के रूप में ऐसे विनाशों का सामना करती है।

अंधे कवि का दुखद अंत : कहानी के केंद्र में एक अंधे कवि की चित्रण है, जो इस विनाश का शिकार हो जाता है। उसका नन्हा, विद्रोही मेघ भी विनाशकारी बादल का ग्रास बनने से बच नहीं पाता।

यह कहानी न केवल भोपाल गैस त्रासदी की घटनाओं पर केंद्रित है, बल्कि यह एक व्यापक संदेश देती है कि पूंजी की अंधाधुंध दौड़ प्रकृति और मानवता दोनों के लिए घातक सिद्ध हो सकती है।

विनाशदूत : कथा-सार

प्रस्तुत कहानी में कहानीकार का सामाजिक और राजनीतिक दृष्टिकोण दिखाई देता है। कहानी में संस्कृत साहित्य के 'मेघदूत' रचना में कालजयी कवि कालिदास ने वर्षा के प्रथम मेघ को नायक का सन्देश वाहक बनाकर अपने प्रेयसी तक सन्देश पहुँचाया था। उसी रूपक के माध्यम से विनाशकारी त्रसदी की विद्रूपता को दर्शाया गया है। लेखिका ने पूँजीवाद और प्रकृति के बीच के युद्ध का चित्रण किया है। जहाँ पूँजीपति खुद को सर्वेसर्वा समझता है और प्रकृति के साथ युद्ध छेड़ता है, जो उसके अन्त का कारण बन सकता है। 'विनाशदूत' कहानी भोपाल गैस दुर्घटना की त्रासदी के पृष्ठभूमि पर आधारित है, जो दुर्घटना 1984 में घटित हुई थी। इस दुर्घटना में यूनियन कार्बाइड इंडिया लिमिटेड के कीटकनाशक संयन्त्र से ज़हरीली गैस का रिसाव हुआ था। इसमें हज़ारों लोग मारे गय और लाखों लोग प्रभावित हुए थे। पूँजीपति वर्ग अपने लाभ के लिए प्रकृति का दोहन करते हैं और इसके परिण शाम स्वरूप होने वाले विनाश के लिए ज़िम्मेदार होते हैं। यहाँ लेखिका ने सार्वजनिक मानवतावादी जीवन मूल्यों की प्रतिष्ठा का आग्रह किया है, जो मानवतावादी मूल्यों के महत्त्व को उजागर करती है।

विनाश-दूत : भोपाल गैस त्रासदी पर लिखी गई कहानी एक रूपक प्रयोग है। मृदुला जी ने इस कथा के माध्यम से भोपाल गैस त्रासदी की विद्रूपता को प्रस्तुत किया है। मृदुला गर्ग के लेखन में सोच का अपना जो मिजाज है उसे समझने के लिए पाठक को मानसिक रूप से उतना ही चैतन्य और चौकस होना जरूरी है। किसी 'ह्यूमर' को समझने के लिए व्यक्ति में 'सेन्स ऑफ ह्यूमर' की प्रखरता होनी चाहिए। रूसी साम्यवाद से प्रभावित लेखिका की कहानियों में प्राय: ऐसे पात्र विद्यमान रहते हैं जो पूँजीवाद के विरोधी हैं। 'विनाशदूत' कहानी में इस सत्य को उद्घाटित किया गया है कि पूँजीपति अपने को सर्वेसर्वा घोषित करता है और पूँजी के नशे में प्रकृति से भी युद्ध छेड बैठता है। यह युद्ध उसके अंत का कारण भी सिद्ध हो सकता है। इसमें विश्व के शक्तिशाली देशों की स्वार्थमूलक संहारक प्रवृत्ति का विरोध है और सार्वजनिक मानवतावादी जीवन-मूल्य की प्रतिष्ठा का आग्रह भी है।

लेखिका की चिन्तन-प्रधान भाषा-रचना का स्वरूप निम्न पंक्तियों में स्पष्ट हो उठता है— "यह शिव का ताण्डव नहीं जो प्रलय में सृष्टि का बीज लिये होगा। यह अंत है, आवृत्तिहीन अंत। यह नाच मनुष्य के निर्देश पर नाचा जा रहा है, दिव्य शक्ति के निर्देश पर नहीं। उस अपूर्ण मनुष्य के निर्देश पर जो अपने को अपूर्ण जानते हुए भी पूर्ण मानने लगा है, अर्ध सत्य पर विश्वास और अर्ध ज्ञान में दम्भ जिसकी प्रवृत्ति बन चुकी है, तभी न प्रकृति के विरुद्ध युद्ध छेड बैठा है। प्रकृति ने नहीं चुना उसे वह खुद उसका संरक्षक बन गया है, प्रकृति रक्षिता हो उसके जैसे। अपने निरंकुश अहंकार से उन्मत्त वह भूल गया कि प्रकृति तभी देती

Edit with WPS Office

है जब नतमस्तक होकर उससे माँग जाये, नहीं तो प्रहार कर उठती है।"11 यह कहानी एक प्रकार से भावात्मक निबन्ध कही जा सकती है, जो ललित निबन्ध का आस्वाद भी देती है।

प्रश्न :

'इक्कीसवीं सदी का पेड़'

'इक्कीसवीं सदी का पेड़' कहानी आधुनिक विकास के विकृत मॉडल और पर्यावरण के प्रति मानवीय संवेदनहीनता पर तीखा प्रहार करती है। पाठ में वर्णित पेड़ और प्रवासी पक्षी के संवाद तथा पेड़ के विक्षिप्तता भरे हँसने के विडम्बना-बोध को अपने शब्दों में स्पष्ट कीजिए। साथ ही बताइए कि लेखिका समाज को क्या संदेश देना चाहती हैं ?

'विनाशदूत'

कालिदास के 'मेघदूत' के विपरीत मृदुला गर्ग की कहानी 'विनाशदूत' में मेघ विनाशकारी विद्रूपता का प्रतीक बनकर उभरता है। भोपाल गैस त्रासदी की पृष्ठभूमि पर आधारित इस कहानी में पूँजीवाद की संहारक प्रवृत्ति, प्रकृति से युद्ध और मानवीय मूल्यों के ह्रास का जो चित्रण किया गया है, उसकी सविस्तार समीक्षा कीजिए।

3. जंगल जातकम्

- काशिनाथ सिंह

आधुनिक कथाकार काशीनाथ सिंह की रचनाओं में हमें देसी पान दिखाई देता है वह अपनी जमीन से जुड़े हुए रचनाकार है अपने जमीन के मिट्टी की शांति खुशबू को वह सुनना चाहते हैं और इसलिए उन्होंने सामान्य मानव की सामान्य जीवन की बातों को अपनी कहानियों के माध्यम से उकर है उन्होंने सम्यक यथार्थ को अपनी कहानियों में लिपिबद्ध करने की कोशिश की है जिस समय यह लिख रहे थे उसे समय यह समाज गहरी संतोष से भरा हुआ था क्योंकि आजादी से पहले मनुष्य ने बहुत सारी अपेक्षाएं की थी, आशाएं रखी थी, इच्छाएं रखी थी परंतु स्वतंत्रता के पश्चात वह सब कुछ मानो स्वप्न हो गया था। पुरानी व्यवस्थाएं जड़ हो चुकी थी, मर चुकी थी और मनुष्य की भ्रष्टाचार वृत्ति नई व्यवस्थाओं को, उसकी जड़ों को खोखला कर रही थी । ऐसे माहौल में, वातावरण में काशीनाथ सिंह जी ने सम्यक सच्चाइयों को प्रतीकात्मक रूप में अपने पाठकों के समक्ष उकेरा है ।

काशीनाथ सिंह की यह चर्चित कहानी है । इस में उन्होंने जल, जंगल और मनुष्य इन तीनों के आपसी रिश्तों को, उनके संबंधों को उजागर करने का प्रयास किया है । वह बताते हैं कि किस प्रकार से व्यक्ति औद्योगीकरण के कारण पूंजीवादी सत्ता के आने के कारण विकास के लिए जंगलों को समाप्त करता जा रहा है । पर्यावरण को, प्रकृति को नष्ट करता जा रहा है । और निरंतर विकास करने के क्रम में वह यह भूलता जा रहा है कि वह अपने पीछे क्या छोड़ना चला जा रहा है और इसका उसे अंदाजा भी नहीं है कि हमारे भविष्य में साथ ही आने वाली संतति के ऊपर इसका क्या प्रभाव पड़ेगा ।

यह कहानी आज के दौर में बहुत अधिक समुचित कहानी है क्योंकि आज भी यदि हम देखते हैं तो पर्यावरण निरंतर नष्ट होता जा रहा है । निरंतर हमसे यह मांग की जा रही है कि हम दिन दुगनी और रात चौगुनी प्रगति से पेड़ों को लगाए । उनका विकास करें जिसमें हमें दूषित हवा में सांस लेने के लिए बाध्य न होना पड़े । इसके अतिरिक्त पॉलिथीन के प्रयोग में, थर्माकोल के प्रयोग में भी प्रतिबंध लगाया जा रहा है । यह सब इसलिए हो रहा है कि मनुष्य और प्रकृति के बीच का जो सुंदर संबंध था, जो रिश्ता था; जिसमें प्रकृति अगर अपनी पूरी की पूरी संपदा, अपना पूरा का पूरा खजाना मनुष्य को अर्पित कर देती थी । फल, फूल, कंदमूल के रूप में तो मनुष्य भी उसकी सेवा करता था उसका ध्यान रखता था । परंतु अब दोनों के बीच में एक गहरी खाई बनती जा रही है, टकराहट की स्थिति उत्पन्न होती जा रही है । मनुष्य अपने विकास के लिए, अपने औद्योगिकीकरण के लिए उसी जंगल को; जिसने उसका हमेशा से साथ निभाया उसको भी बर्बाद करने में संकोच नहीं मान रहा है ।

Edit with WPS Office

जंगल जातकम् प्रकृति से मनुष्य के अलग होने की उसके चटकने की कहानी है । यह एक नीतिपरक कहानी है जिसमें उन्होंने जल, जंगल और मनुष्य के आपसी रिश्तों को उसकी पूरी सच्चाई के साथ अभिव्यक्त किया है । मनुष्य अपने स्वार्थ के कारण अपनी कु-प्रवृत्तियों से निरंतर पर्यावरण को दूषित कर रहा है ।

कहानी के प्रारंभ में जंगल और मनुष्य के सुंदर संबंध के साथ उनके जन्म के रिश्ते का उल्लेख किया गया है । यह जंगल बबूल, आम, महुआ, पलाश, बरगद इत्यादि बहुत सारे पेड़ों से युक्त है । इसे पूरी तरह से जंगल भी नहीं कहा जा सकता और यह भयावह भी नहीं है। यहां पर सभी वृक्ष अपनी-अपनी प्रकृति के अनुरूप है । किंतु वह एक दूसरे से भिन्न होते हुए भी एक दूसरे के सुख-दुख में एक दूसरे के साथ खड़े दिखाई देते हैं ।

लेखक ने लिखा है, 'स' इलाके में एक जंगल था । सारे जंगल की तरह लंबा चौड़ा मगर भयावह नहींइनमें आपस में ना किसी का झगड़ा था और ना कोई अदावत किंतु एक दिन पश्चिम से उठे अपनी और आते काली दर्द को देख 'घमोच' मनुष्य और बेंटरहित कुल्हाड़ियों का काफिला जंगल में आ धमकता है और तालाब के किनारे अपना डेरा डाल लेता है । सारे वृक्ष विस्मय और भय से कम उठाते हैं उन्होंने घमोच जैसा व्यक्ति अपने जीवन में पहले कभी नहीं देखा था ऐसे में जंगल में अब तक की सारी सुख शांति नष्ट हो जाती है । वह सारे के सारे अपने जंगल के वृद्ध परिपक्व बरगद के पेड़ के पास चले जाते हैं और उससे पूछते हैं कि यह लोग कौन है ऐसा व्यक्ति तो हमने पहले अपने जीवन में नहीं देखा । तो बरगद उन्हें बताता है कि जिसने घोड़े की लगाम पकड़ रखी है वह मनुष्य है और जो घोड़े पर बैठा है उसके गाल इतने फूलें हैं की आंखें लुप्त हो गई है । ऐसे में वृक्ष बरगद से पुनः पूछते हैं कि क्या इस व्यक्ति का हमें अपने जंगल में स्वागत करना चाहिए ? आदरतिथ्य करना चाहिए ? तो बरगद उन्हें मना कर देता है । उन्हें कहता है कि , " मुझे कुछ आशंका हो रही है और उसे आशंका के तहत मैं तुम्हें यह आज्ञा देता हूं कि , " तुम घमोच को तुरंत जंगल छोड़ने का आदेश दो । " तभी पेड़ों को घमोच की चीखने-चिल्लाने की आवाज सुनाई देती है । वह अपने साथ आए मनुष्यों से कह रहा था कि , " बहादुरों यही वह बस्ती है । जिसे हमें उजाड़ना है । खत्म करना है । हमें मनुष्यों के लिए मिल खड़ी करनी है । कारखाने बनाने हैं । कोयले की खान खोदनी है। यह निहत्थे पेड़ झाड़ झंकार उनके लंबे चौड़े आकार से डरने की जरूरत नहीं है । हमें जल्दी ही उनके वजूद को मिटा देना है ।

विकास के नाम पर निरंतर पर्यावरण इस प्रकार से नष्ट होता जा रहा है और यह आज ही नहीं हमारे आने वाली संतति के लिए भी एक शोचनिय प्रश्न है । क्योंकि उन्हें हम कभी भी स्वस्थ वातावरण नहीं दे पाएंगे । घमौच स्वार्थ है । स्वार्थ से परिपूर्ण है और इसलिए वह अंधे सत्तारूढ़ व्यक्ति की महत्वाकांक्षाओं का प्रतीक बनकर इस कहानी में उपस्थित हुआ है। उसके आदेश पर एक कुल्हाड़ा अपनी पूरी शक्ति से एक ठूंठ पर झपटता है । किंतु मूर्छित होकर गिर पड़ता है उसकी मूर्छा के कारण अन्य कुल्हाड़ियां भी भय और आतंक से उसे घेर कर खड़े हो जाती है । वह घमोच की आज्ञा का पुनः पालन करने से डर जाते हैं । ऐसे में घमोच वृक्षों की दलील को समझ नहीं पाता । उसे समझ नहीं आ रहा कि वृक्ष अपने आप को काटने से मना क्यों कर रहे हैं, क्यों इतना उपद्रव मचा रहे हैं । इधर वृक्ष भी यह समझ नहीं पा रहे हैं कि, निरंतर जब वह मनुष्य का साथ देते आए हैं तो आज ऐसा क्या कारण उपस्थित हो गया कि मनुष्य ही उन्हें बर्बाद करने आया है । वह घमौच के मनुष्य होने पर भी संदेह व्यक्त करते हैं । वह कहते हैं, "हमारे पूर्वजों और मनुष्यों का बड़ा ही अंतरंग संबंध रहा है । उनके लिए हम अपने पुष्प, कंदमूल, फल, पशु, पक्षी सब कुछ न्योछावर कर चुके हैं । हमें संदेह हैं कि आप मनुष्य हैं । " उनके ऐसा कहने पर घमोच समझ जाता है कि वृक्ष अब उसकी चालबाजी को समझ चुके हैं । ऐसे में वह अपने लिए एक मोहरे को ढूंढने की कोशिश करता है । हरबंस नाम का एक बाँस उसकी रौबीली आवाज से प्रभावित होता है और उसे कहता है कि, " मैं तुम्हारी आवाज से बहुत अधिक प्रभावित हूँ ।" घमौच समझ जाता है कि हरबंस को अपने पक्ष में करना सहज है और वह घोड़े ही लगाम पकड़कर चलने वाले से हरबंस के साथ अलग से बात करने का संकेत देता है । जब बाकी वृक्ष इस पर आपत्ति दर्ज करते हैं और कहते हैं कि, " जो कुछ भी कहना है हमारे सामने कहो।" तो घमोच हरबंस को उकसाते हुए कहता है, " क्यों ? वह और तुम पेड़ हो । यह नहीं । यह तुम्हारी जात से बाहर है । यहां खुद खा पीकर इतने मोटे हो गए हो । भुजाएं लंबी और तगड़ी बना ली है । कान विशाल और लाल कर लिए हैं धूप और पानी से बचने के लिए इतना विस्तार कर लिया है । जड़े भी गहरी जमा ली है । और यह बिचारा हरबंश... ?

कुल्हाड़े बरगद के पेड़ पर झपटते हैं क्योंकि उन्हें लगता है कि यही ऐसा वृक्ष है जो हमारे मार्ग में बाधा उपस्थित कर रहा है किंतु उनके झपटते ही वह उसकी दाढ़ी से उलझ कर गिर जाते हैं। बरगद पीपल से बांसों की बस्ती पर निगाह रखने के लिए

Edit with WPS Office

कहता है क्योंकि उसका मानना है कि वह नासमझ है। बडी जल्दी घुटने टेक देते हैं। अपने चारों ओर सीर हिलाते रहते हैं । उनमें स्थिरता और धैर्य नहीं है। वह सभी को एक कहानी सुनाता हैं । उसका ना है कि जब पेड़ पेड़ के, लोहे लोहे के और मनुष्य मनुष्य के शत्रु हो जाते हैं तब निश्चित रूप से तबाही आती है। और यदि यही एकजुट हो जाते हैं तो घमोच जैसे व्यक्ति उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकते । और यदि जंगल के पेड़ भी एकजुट हो जाए, एक साथ विरोध करने लगे तो घमोच और मनुष्य भी उनका कुछ नहीं बिगाड़ सकते । यह कथा सुनाने के साथ ही उसे हरकारे द्वारा खबर मिलती है कि, " मनुष्य और पटनाग्राम के बाँसों के बीच बातें हो रही है " मनुष्य बाँसों को अपने साथ रखने का लालच दे रहा है । यह खबर सुनते ही बरगद मूर्च्छित हो जाता है और अंतिम सांस लेता है । वन में चारों तरफ भय व्याप्त हो जाता है। बरगद की मृत्यु के साथ ही कहानी चरम सीमा पर समाप्त हो जाती है ।

मनुष्य और मानवीय हितों की बात करती हुई यह कहानी जंगल के विनाश को हमारे सामने उपस्थित करती है । यह कहानी बताती है कि किस प्रकार से पूंजीवादी आक्रामकता हमारे जंगलों को नष्ट कर रही हैं । स्थानीय संघर्षों कोमिटकर ही जंगल बचाए जा सकते हैं । मनुष्य और जंगल के अस्तित्व की कथा को हमारे सामने यह कहानी लेकर आती है। इस कहानी में आए पात्रों का लेखक ने मानवीकरण किया है ।कहानी में प्रारंभ से अंत तक कौतूहल का तत्व दिखाई देता है। घमोच मानवता के हित का बहाना लेकर जंगल में प्रवेश करता है किंतु उसका वास्तविक उद्देश्य जंगलों को नष्ट कर के कारखाने बनाना है। जिसका पेड़ एकजूट होकर विरोध करते हैं । उनके विरोध से तंग आने पर मनुष्य यह जानता है कि यदि वह पेड़ों के बीच में फूट डालेगा तो कुछ पेड़ निश्चित रूप से उसके पक्ष में हो जाएंगे और ऐसे में वह जो कुछ करना चाहता है अपने उद्देश्य में सफल हो भी जाता है । उसका सोचना गलत भी नहीं था। कुछ पेड़ वास्तव में उसके पक्ष में हो जाते हैं। किंतु बरगद की सूझबूझ के कारण उसकी उम्र, अनुभव के कारण वह मनुष्य को अपने उद्देश्य में सफल नहीं होने देता और बरगद के कारण जंगल बच जाता है ।

विवेचना में प्रति के माध्यम से कहानी के मूल संवेदना को व्यक्त किया गया है जंगल के पश्चिम से उठता काले रंग का धुएं का गब्बर औद्योगीकरण का प्रतीक है घोड़े पर सवार गेमोच पूंजीवादी सट्टा का प्रतीक बंद कर हमारे सामने आता है घोड़े की लगाम पकड़ने वाला मनुष्यपूंजीवाद का दास है कुल्हाड़ी हथियारों और मशीनों का रूप लेकर उपस्थित होते हैंपेड़ों की बस्तियों को लेखक ने आदिवासियों की बस्तियों और जंगल के प्रतीक के रूप में उद्घाटित किया है । घमौच की बोली को यदि हम देखते हैंतो वह अपने स्वभाव के अनुसार कर्कश है और अपने मन से युक्त है वह अपने आप को स्वयंभू मानता है सर्वाधिक कर संपन्न व्यक्ति के रूप में वह कहानी में उभरता है वह इसलिए उद्दंड है निरंकुश हैवह जंगल के पेड़ों की बात को समझने से इनकार कर देता है बरगद आदिवासियों का प्रतिनिधित्व करते हैं वह पूंजीवादी विनाशकारी शक्तियों का विरोध करता है और अपनी आयु के साथ-साथ अनुभव के कारण उसमें दूरदर्शिता दिखाई देती है । वह विनम्र है । ज्ञान से युक्त है । और इसलिए वह भविष्य के प्रति चिंतित भी हैं। वह अपने आचरण से अपने प्रतीकात्व को सिद्ध करता है। बांस वाली बस्ती उन स्वार्थी व्यक्तियों का प्रतीक है जो अपने हित के लिए पूंजीवादी सत्ता या जो भी उसे समय राज कर रहा है उसके अधीन हो जाते हैं। उसकी चाटुकारीता करते हैं। और ऐसा करते समय वह अपने जाति के लोगों का अहित करने में भी संकोच नहीं करते। मनुष्य जंगल की दुर्बलताओं से अवगत है। और इसलिए वह पेड़ों में फूट डालकर उन्हें घमोच के पक्ष में करने का प्रयास करता है। यहां कहानीकार ने इस बात को स्पष्ट किया है कि सत्तारूढ़ जो भी होगा वह लोगों में 'फूट डालो राज करो' की नीति को अपनाकर अपना स्वार्थ सिद्ध करेगा ।

सहयोगी पत्रों में यदि हम देखें तो मनुष्य कुल्हाड़ी दरख्त बाबुल पलाश पीपल बांस के पेड़ों को लिया जा सकता है जो कहानी में अपने-अपने दृष्टिकोण से कहानी के विकास में सहायक सिद्ध होते हैं ।

इस कहानी में संक्षिप्त, भावपूर्ण और संप्रेषणीय है। उसके साथ ही वह पात्रों की मानसिक स्थिति को उजागर करने में भी सहायक हुए हैं और पात्रों के मानसिक द्वंद्व को भी उभरने में सक्षम दिखाई देते हैं । बरगद और वृक्षों के संवाद घमोच के चरित्र को पूरी तरह से अभिव्यक्त करते हैं। घमौच के संवाद वृक्षों के प्रति पूंजीवादी आक्रामकता को सिद्ध करते हैं। वृक्षों के संवाद पूंजीवादी सभ्यता के अंतर्विरोध को व्यक्त करते हैं। और बताते हैं कि किस प्रकार से मनुष्य उनका विनाश करने पर तुले हुए हैं घमोच का बड़बड़ाना, क्रोधित होना पूंजीवादी कार्यशैली को व्यक्त करता है । कि जब पूंजीवादी व्यवस्था को यह लगता है कि उसका विरोध किया जा रहा है तो वह क्रोधित होकर अनाचार करने पर उतारू हो जाता है।

Edit with WPS Office

किसी भी कहानी में वातावरण का सजीव और प्रभावी चित्रण होना आवश्यक होता है। वातावरण दो प्रकार के होते हैं - एक आंतरिक और दूसरा बाह्य । आंतरिक वातावरण में प्रकृति, परिवेश, और पात्रों के अंतर्मन को लिया जाता है। बाह्य वातावरण में पात्र आदि के रूपकर का वर्णन किया जाता है। जंगल जातकम् इस दृष्टि से परिवेश प्रधान कहानी है। लेखक ने स्वयं भी कहानी में लिखा है,"जब मैं जंगल कहूं तो इसका मतलब है सिर्फ जंगल" यह छोटी-छोटी पहाड़ियों और पठाडी मैदाने से घिरा है । इस प्रकार हम देखते हैं की पूरी की पूरी कहानी जंगल और उसके परिवेश को अपने अंदर समेटे हुए हैं ।

भाषा की दृष्टि से यदि हम देखें तो कहानी में सजीवता की सृष्टि करने के लिए भाषा का सुदृढ़ होना आवश्यक है । पात्रों की स्थिति, शिक्षा और वातावरण के अनुरूप होना आवश्यक है। क्योंकि भाषा के माध्यम से ही कहानी में कथानक में प्राणवत्ता का संचार होता है। जंगल के पात्रों की भाषा संस्कृतनिष्ठ हिंदी है। इसके साथ ही यदि हम देखें तो बरगद की भाषा गरिमामई है। पेड़ प्राचीन जंगल का प्रतीक है। इसलिए उसकी भाषा विनम्र है। जो मनुष्य का साथ निभाती है। प्रकृति की भाषा में इस प्रकार से हमें सभ्यता दिखाई देती है। वह कहीं भी उद्दंडता से बात करती दिखाई नहीं देती। वह अपनी बात सही तरीके से विनम्रता के साथ प्रस्तुत करती है। शुद्ध संस्कृत तत्सम शब्दों को लेखक ने अपनी इस कहानी में स्थान दिया है। जिसमें श्रेष्ठ, क्रिया, उद्यमी, साक्षी, संपदा आदि शब्दों को उदाहरण के रूप में देखा जा सकता है । कहीं-कहीं पर जंगल के पात्रों की भाषा मिश्रित हिंदी है। तद्भव शब्दों में पुरखे, बारिश, एकजूट, झाड़-झंखाड आदि शब्द दिखाई देते हैं। देशज शब्दों में पांखें, क्रौंध, कांच आदि शब्द मिलते हैं । उर्दू और अंग्रेजी के शब्दों से भी कहानीकार ने परहेज नहीं किया है। उर्दू के शब्दों में रिश्ता, अदावत, जिंदगानी और अंग्रेजी के शब्द मार्च का खुलकर प्रयोग किया है। अपनी भाषा को सजाने संवाने के लिए लेखक ने मुहावरे और लोकोक्तियों का भी सहारा लिया है। मुहावरों में लगाम हाथ में लेना, आंखें लुप्त होना, गुलाम बनाना को लिया जा सकता है। लेखक ने विभिन्न शैलियों के माध्यम से अपने भावों को अभिव्यक्त किया है इस कहानी में वर्णनात्मक, नाटक की पूर्व दीप्ति शैली का प्रयोग किया गया है। इसके साथ ही विवेच्य कहानी में लोककथा के माध्यम से प्रतीकात्मक शैली में कथाकार ने अपनी बात को कहा है। कहानी में जंगल, घमोच उसकी सेना का वर्णन जहां कहीं भी लेखक ने लिया है वहां पर लेखक ने वर्णनात्मक शैली का प्रयोग किया है । पेड़ों का मानवीकरण हुआ है और उनमें प्रतीकात्मकता दिखाई देती है। उनकी बातचीत संवादात्मक शैली में व्यक्त है। जैसा कि पहले भी कहा गया है कि उनकी कहानियों में कविता दिखाई देती है। कथा का अंत काव्यात्मक है ।

कोई भी कहानी उद्देश्य रहित नहीं होती कहानी का उद्देश्य मनोरंजन देने के साथ-साथ शिक्षा प्रदान करना भी होता है इस कहानी का उद्देश्य भी मनोरंजन के साथ-साथ मनुष्य को जल जंगल और उसके रिश्ते के महत्व को बताना था इसका पूरा का पूरा ताना बाना जल जमीन जंगल और मनुष्य केआदिवासी विमर्श के चारों ओर घूमता हुआ दिखाई देता है जहां लेखक ने अपने पाठकों से पर्यावरण को बचाने की एक प्रकार से अपील की है बस के माध्यम से सत्ताधारियों को छठ के झूठे बहकावे में आकर अपने ही देश और लोगों से गद्दारी करने वाले लोगों पर लेखक ने करारा व्यंग्य किया है देखा जाए तो इस कहानी मेंवह सब कुछ दिखाई देता है जो आज के संदर्भ में पूरी तरह से सार्थक है सफल है और देखा जाए तो यह कहानी आज के संदर्भ में पाठकों को बहुत अधिक रोचक लगने के साथ-साथ में तो पूर्ण भी लगती है क्योंकि आज भी हमें जंगल में अपने प्रकृति को बचाने के लिए सोचना ही चाहिएउसके लिए उद्योग करना ही चाहिए उसके लिए हमें विभिन्न प्रकार के समाधानों को सोने की कोशिश करनी ही चाहिए तभी जंगल के साथ मनुष्य का जो सुंदर संबंध प्रारंभ से रहा है जिस तरह से प्रकृति हमेंफल फूल सुंदरता देती आई है वृक्ष हमें सुख देते हैं उसे सुख को प्राप्त करने के लिए उसे प्रकृति का आनंद लेने के लिए उसका बच्चा रहना भी बहुत जरूरी है यदि इसी प्रकार से जंगल नष्ट होते जाएंगे प्रकृति नष्ट होती जाएगी तो मनुष्य भी बहुत अधिक समय तक सुंदर स्वस्थ वातावरण में सांस नहीं ले पाएगा और उसका अंत भी धीरे-धीरे निश्चित होगा।

प्रश्न :

'जंगल जातकम्' कहानी में निहित प्रतीकात्मकता को स्पष्ट करते हुए सिद्ध कीजिए कि यह कहानी आधुनिक पूंजीवादी विकास और पर्यावरण संकट का जीवंत दस्तावेज है।

(इस प्रश्न के अंतर्गत छात्र घमोच, कुल्हाड़ी, बरगद, हरबंस बाँस और काले धुएँ के प्रतीकार्थ के साथ-साथ जल-जंगल-मनुष्य के द्वंद्व का विस्तृत विवेचन करेंगे।)

Edit with WPS Office

कहानी कला के प्रमुख तत्वों (कथानक, पात्र-योजना, संवाद, परिवेश, भाषा-शैली और उद्देश्य) के आधार पर काशीनाथ सिंह कृत 'जंगल जातकम्' कहानी की विस्तृत समीक्षा कीजिए।

(यह प्रश्न शास्त्रीय आलोचनात्मक प्रारूप पर आधारित है, जिसमें कहानी की संरचनात्मक खूबियों और उसके वैचारिक पक्ष का समग्र मूल्यांकन अपेक्षित है।)

"फूट डालो और राज करो की नीति के समक्ष सामूहिक एकता और परंपरा का पराभव ही 'जंगल जातकम्' की मूल त्रासदी है।" बरगद और बाँसों (हरबंस) के प्रसंग के विशेष संदर्भ में इस कथन की सप्रमाण विवेचना कीजिए।

4. कहीं दूर जब दिन ढल जाये : बटरोही

लेखक परिचय :

जन्म : 25 अप्रैल 1946, छानागाँव, अल्मोड़ा (उत्तरांचल)

शिक्षा : प्रारम्भिक शिक्षा गाँव में, स्नातकोत्तर शिक्षा नैनीताल से लेने के बाद 1970 में इलाहाबाद विश्वविद्यालय से प्रेमचंद-पूर्व कथा-साहित्य पर डी-फिल।

कई सरकारी कॉलेजों में अध्यापन तथा अनेक पत्रिकाओं का सम्पादन करने के बाद सम्प्रति कुमाऊँ विश्वविद्यालय, नैनीताल के हिन्दी विभाग में प्रोफेसर तथा अध्यक्ष। तीन साल भारत सरकार की सांस्कृतिक आदान-प्रदान योजना के अन्तर्गत आत्वॉश लोराँद विश्वविद्यालय, बुडापेस्ट (हंगरी) में इंडोलॉजी का अध्ययन एवं इस दौरान काफ्का के शहर प्राग, रोमानिया, ऑस्ट्रिया, फिनलैंड, जर्मनी, लन्दन आदि की यात्रा।

अब तक चार कहानी-संग्रह, तीन उपन्यास, चार लघु-उपन्यासों का एक संग्रह, दो आलोचनात्मक पुस्तकें तथा हिन्दी-अंग्रेजी में दर्जन से अधिक संकलनों का सम्पादन। इन दिनों अध्यापन के अतिरिक्त उत्तरांचल की सांस्कृतिक जड़ों को खोजने तथा तत्सम्बन्धी लेखन में समय बीतता है।

कथा-सार :

वर्तमान समय मनुष्य के अस्तित्व के चिन्तन का समय है। मनुष्य के अस्तित्व के लिए स्वयं इसका होना रहना आवश्यक है जितना कि पर्यावरण का बचे रहना आवश्यक है। जब साँस लेने को हवा ही नहीं होगी तो जीवन कैसे बचेगा? शहरी व्यक्ति बहुत पढ़-लिखकर पर्यावरण की जिस सैद्धान्तिकी की समझ पाता है, पहाड़ व गाँव का आदमी उसे संस्कार के रूप में लेकर बड़ा होता है। 'चिपको आन्दोलन' से हमें यह जानने को मिला कि पर्यावरण तथा पारिस्थितिकी वहाँ के लोगों का अभिन्न हिस्सा है।

प्रस्तुत कहानी संस्मरण के दायरे में आती है। लेखक अपनी बुआ से मिलने पहाड़ स्थित गाँव में जाता है। यहाँ का वातावरण लेखक के शहरी वातावरण से एकदम अलग है। नैसर्गिक और संवेदनशील। जो उनकी प्रकृति का अंग है। कुत्ते, बिल्ली, पक्षी, साँप आदि उनके जीवन का हिस्सा हैं।

लोग प्रकृति के सब उपादानों के साथ पूरी संवेदना के साथ जीते हैं। बुआ का यह कहना 'भगवान का वरदान होता है साँप-कीड़ों में' बताता है कि वहाँ के मनुष्य ने अन्य जीवों को स्वीकार कर लिया है। सहअस्तित्व का आदिम नियम बिना कहे यहाँ लागू हो रहा है। सम्भवतः इसी कारण जो लोग जीव मात्र के प्रति करुणाशील हैं मनुष्य के लिए तो बेहद संवेदनशील हैं। इसीलिए बुआ भतीजे से मिलकर रो पड़ती है। आँसुओं का सम्बन्ध स्पर्श से होता है। कहानी मनुष्य, जीव तथा ग्रामीण भावबोध को प्रस्तुत करती है।

असल में यह कहानी मानवीय स्पर्श और उसे आत्मा में उतार लेने की कहानी है। संस्मरण के क्षेत्र की होते हुए भी यह मानवीय

Edit with WPS Office

भावों की कहानी है।

मानवीय स्पर्श को महसूसने की फुर्सत शहर में नहीं है। ऐसा हृदय भी नहीं रहा जो स्पर्श का महत्त्व समझे। किसी सम्बन्धी को स्पर्श कर जिस ममता की सृष्टि होती है वह यहाँ जीवन्त हो उठी है। साथ ही यह भी ध्वनित होता है कि ऐसी संवेदनशीलता प्रकृति के साथ ही सम्भव हो पाती है।

कथा की व्याख्या

बटरोही द्वारा रचित यह रचना केवल एक संस्मरण या कहानी मात्र नहीं है, बल्कि यह शहरी यांत्रिकता बनाम ग्रामीण सहजता, पर्यावरण एवं जीव-जंतुओं के साथ सह-अस्तित्व तथा मानवीय संवेदना और स्पर्श की भाषा का अत्यंत मार्मिक और गहरा विश्लेषण प्रस्तुत करती है। इसका विस्तार से विवेचन निम्नलिखित बिंदुओं के अंतर्गत किया जा सकता है:

1. शहरी औपचारिकता और ग्रामीण आत्मीयता का द्वंद्व

लेखक आधुनिक शहरी जीवन की विडंबना को उजागर करता है, जहाँ रिश्ते केवल सामाजिक औपचारिकताओं और सतही शिष्टाचार (हाथ मिलाने जैसी क्रियाओं) तक सिमट कर रह गए हैं। शहर में लोग स्पर्श की गहराई और आत्मीयता को भूल चुके हैं, बल्कि आधुनिकतावादी दृष्टिकोण में तो स्पर्श को 'संक्रमण' या रोग का पर्याय मान लिया गया है।

इसके विपरीत, गाँव में रहने वाली अनपढ़, वृद्ध बुआ के पास बौद्धिक शब्दावली नहीं है, लेकिन उनके पास 'स्पर्श की भाषा' है। जब बुआ लेखक को छूती हैं, सिर से गालों तक टटोलती हैं, तो उनके दुर्बल हाथों में भी एक अलौकिक आत्मीय ऊष्मा और शक्ति महसूस होती है। यह स्पर्श शहरी दिखावे से परे उस रक्त-संबंध और ममता की पुनर्रचना करता है, जो वर्षों से दबी हुई थी।

2. भाषा से परे 'आदिम सम्बोधन' और अश्रु-संवाद

कहानी में बुआ के मुख से अचानक फूटा शब्द—'दिगौ!'—संवेदना के चरम को दर्शाता है। लेखक के अनुसार यह शब्द भले ही बाह्य रूप से निरर्थक या व्याकरण-विहीन लगे, लेकिन इसमें पीढ़ियों का दर्द, मायके की स्मृतियाँ, वियोग और असीम वात्सल्य समाया हुआ है।

शहर में जहाँ आँसुओं को स्वाद या औपचारिकता से जोड़ा जाता है, वहीं बुआ के बहते आँसू भीतर की सजल स्मृतियों का पिघलना हैं। बुआ का 'दिगौ' कहना और लेखक की आँखों का भर आना—यह दो पीढ़ियों और दो दुनियाओं के बीच शब्दों के बिना हुआ वह संवाद है, जो किसी भी तर्क या व्याकरण से परे सीधा आत्मा को छूता है।

3. सह-अस्तित्व और पर्यावरण की व्यावहारिक समझ

कहानी का सबसे सबल पक्ष है प्रकृति और मानवेतर जीवों के साथ एकात्मता। नगरों में पर्यावरण की चिंता केवल बौद्धिक विमर्शों, सेमिनारों और सिद्धांतों तक सीमित रहती है। जबकि पहाड़ और गाँव के लोग इसे अपने जीवन-संस्कार के रूप में जीते हैं।

बुआ के घर में बिल्ली दही की हाँडी की रखवाली करती है, कुत्ता कमरे के एक कोने में अपनी सुरक्षित जगह बनाता है। यहाँ तक कि जब चबूतरे से एक विशाल काला साँप निकलता है, तो बुआ उसे भगाने या मारने के बजाय हटकर रास्ता देती हैं और कहती हैं कि यह तीन पुश्तों से खेत और घर की रखवाली करने वाला 'भगवान का वरदान' है। बुआ द्वारा साँपों के देखने, गंध व स्पंदन को महसूस करने की समझ किसी प्राणीशास्त्रीय ज्ञान से कम नहीं है। यह दृष्टि दर्शाती है कि प्रकृति में कोई भी जीव पराया या शत्रु नहीं है; सभी एक ही जीवन-श्रृंखला के अंग हैं।

4. भौतिक उपहारों पर भारी पड़ती मानवीय ममता

Edit with WPS Office

लेखक बुआ के लिए शहर के मशहूर रेस्तरां से फ़ास्ट फ़ूड, मिठाई के डिब्बे और साड़ियाँ लेकर जाता है। लेकिन बुआ के लिए उन भौतिक वस्तुओं का कोई मूल्य नहीं है; वे उन्हें खिड़की पर जस-का-तस छोड़ देती हैं। बुआ के लिए सबसे अनमोल उपहार उनका अपना भतीजा है, जिसमें वे अपने भाई के बचपन और अपने अतीत को ढूंढती हैं। वे लेखक को कांसे की थाली में पारंपरिक 'भात और झोली (कढ़ी)' तथा ओगल की सब्जी प्रेमपूर्वक परोसती हैं। यह प्रसंग आधुनिक उपभोक्तावादी मानसिकता पर करारा प्रहार है, जहाँ वस्तुओं को प्रेम का विकल्प मान लिया गया है।

5. प्रकृति का मानवीकरण और ढलता दिन (प्रतीकात्मकता)

शीर्षक 'कहीं दूर जब दिन ढल जाये' कथा में गहरा प्रतीकात्मक अर्थ लिए हुए है। ढलता हुआ सूरज बुआ की ढलती हुई उम्र, उनके एकाकी जीवन और पहाड़ के निर्जन होते परिवेश का प्रतीक है।

विदाई के समय, जब लेखक लौटने लगता है, तो पहाड़ियों के बीच खड़ी बुआ ढलते सूरज से विदा लेती प्रतीत होती हैं। ऐसा लगता है मानो प्रकृति (सूरज और पहाड़) ही उनके अकेलेपन की दैनिक संगी हो। लेखक का वहाँ पहुँचना बुआ के जीवन में मानो पूरे सूरज का उतर आना था।

निष्कर्ष

यह रचना पाठक को यह सोचने पर विवश करती है कि विकास और आधुनिकता की अंधी दौड़ में हमने क्या खो दिया है। लेखक यह संदेश देते हैं कि जब तक मनुष्य प्रकृति के अन्य उपादानों और अपनी अंतर्निहित संवेदनशीलता से जुड़ा रहेगा, तभी तक उसका मानवीय अस्तित्व सुरक्षित रह सकता है। बुआ का चरित्र पहाड़ी संस्कृति की उस सहज करुणा का प्रतीक है जो आज के यांत्रिक युग में लुप्तप्राय होती जा रही है।

प्रश्न :

'कहीं दूर जब दिन ढल जाये' संस्मरण के आधार पर स्पष्ट कीजिए कि लेखक की बुआ का प्रकृति तथा जीव-जंतुओं (जैसे साँप, कुत्ते, बिल्ली) के प्रति क्या दृष्टिकोण था और यह शहरी सोच से किस प्रकार भिन्न है?

लेखक द्वारा बुआ के लिए लाए गए उपहारों (फ़ास्ट फ़ूड, मिठाई, साड़ियों) की उपेक्षा कर बुआ का उन्हें 'स्पर्श' करना और 'दिगौ' कहना किस मानवीय संवेदना को व्यक्त करता है? विस्तार से समझाइए।

5. जंगल पर विकास : हरिराम मीणा

लेखक परिचय :

हरिराम मीणा का जन्म 01 मई, 1952 को राजस्थान के सवाई माधोपुर जिले के वामनवास नामक गाँव में हुआ। हिन्दी साहित्य जगत में उनकी आदिवासी साहित्यकार के रूप में पहचान है। वे भारतीय पुलिस सेवा आईपीएस से सेवानिवृत्त हुए हैं। अब तक उनके तीन काव्य-संग्रह, तीन यात्रा वृत्तान्त, एक प्रबन्ध काव्य, तीन आदिवासी विमर्श की पुस्तकें तथा तीन उपन्यास प्रकाशित हो चुके हैं। उन्हें साहित्यिक योगदान के लिए डॉ अंबेडकर राष्ट्रीय पुरस्कार, राजस्थान साहित्य अकादमी का मीरा पुरस्कार एवं विशिष्ट साहित्यकार सम्मान, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान द्वारा 'महापण्डित राहुल सांकृत्यायन सम्मान', 'विश्व हिन्दी सम्मान' 2015 सहित कई पुरस्कारों से उन्हें सम्मानित किया गया। इनकी पुस्तकें देश के अनेक विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में सम्मिलित हैं।

कथा-सार :

हरिराम मीणा की प्रस्तुत कहानी में प्राकृतिक संसाधनों के अन्धाधुन्ध दोहन की कीमत पर किये जाने वाले विकास के घातक परिणामों का चित्रण एक फन्तासी के रूप में किया गया है। सृष्टि आरम्भ के सतयुग से लेकर वर्तमान कलियुग तक जंगल

Edit with WPS Office

विनाश की श्रृंखला कायम है। लेखक के स्वप्न में जो स्मृति संसार था जो महानगर में अरण्यरोदन या जंगल विनाश के रूप में अभिव्यक्त हुआ है। जो जंगल पहले प्राकृतिक सम्पदा हुआ करता था उसे अब राष्ट्रीय सम्पत्ति घोषित किया जा चुका है। उन्हें खण्ड-खण्ड कर बहुराष्ट्रीय निगमों को सौंपा जा रहा है।

जंगल का अपना विलाप लेखक के शब्दों में, "तुम मनुष्य हो, तुम्हारा इतिहास बर्बरताओं से भरा हुआ रहा है जिसमें आक्रमण, युद्ध, हिंसा, अपहरण, बलात्कार, आधिपत्य, वर्चस्व, दासता और भी न जाने क्या-क्या क्रूरताएँ रही हैं।" कहानी में समय, जंगल, आग, स्वप्न, स्मृतियाँ आदि प्रतीकों का सहारा लिया गया है वहीं अर्थ मूवर्स, बुलडोजर, रोड रोलर, डायनामाइट, बारूद, ठूंठ, सफेद ध्वज बहुराष्ट्रीय कम्पनियों को खलनायक के रूप में प्रस्तुत किया है। जंगल के विनाश की कीमत पर किया जाने वाला विकास आदिवासियों, वन्य प्राणियों तथा पृथ्वी के पारिस्थितिकीय सन्तुलन के लिए विनाश बनकर सामने आता है। प्रकृति की पक्षधरता का सन्देश देने वाली यह कहानी है।

कहानी की व्याख्या :

'जंगल पर विकास' समकालीन हिंदी साहित्य के सशक्त आदिवासी विमर्शकार एवं पर्यावरण-चिंतक हरिराम मीणा द्वारा रचित एक प्रतीकात्मक और फंतासीपरक कहानी है। यह रचना आधुनिक पूँजीवादी विकास के उस क्रूर चेहरे को उजागर करती है, जो प्रकृति, वन-संस्कृति और आदिम जीवन-मूल्यों को कुचलकर खड़ा हो रहा है।

1. काल-चक्र, स्मृतियाँ और महानगर का अरण्यरोदन

कहानी की शुरुआत काल-चक्र के थमने और समय के एक अबोध बालक की तरह विलाप करने से होती है। कथावाचक स्वयं को आदिम युग की सरहदों को पार कर महानगर की कृत्रिम, चमक-दमक भरी सभ्यता का सदस्य बनते हुए देखता है। महानगर में प्रवेश के बाद उसकी रातें अशांत हो जाती हैं। नींद और स्वप्न के बीच उसे जंगल का परिचित स्वर सुनाई देता है। यह स्वप्न केवल एक व्यक्तिगत स्मृति नहीं, बल्कि सामूहिक चेतना का विलाप (अरण्यरोदन) है।

2. पौराणिक संदर्भ और ऐतिहासिक विनाश की निरंतरता

कहानी में जंगल अपनी व्यथा व्यक्त करते हुए स्पष्ट करता है कि मनुष्य का प्रकृति-विरोधी रवैया नया नहीं है। पौराणिक काल से ही वनों का दोहन और विनाश जारी है:

सतयुग: सुरासुर संग्रामों और कृषि योग्य भूमि के विस्तार के नाम पर वनों पर पहला आघात हुआ।

त्रेतायुग: लंका-युद्ध की तैयारियाँ और सैन्य विस्तार वनों की छाती पर निर्मित हुए।

द्वापरयुग: खाण्डव वन का दाह हुआ, जिसमें मयदानव, अश्वसेन और चार सारंग पक्षियों को छोड़कर समूची जैव-विविधता भस्म कर दी गई।

कलियुग: आधुनिक मनुष्य स्वयं को 'सभ्य', 'वैज्ञानिक' और 'सुसंस्कृत' कहता है, लेकिन इसी काल में प्रकृति का सबसे अधिक और निर्मम विनाश हो रहा है।

3. पूँजीवाद, आधुनिक तंत्र और प्रकृति का संहार

कथा में आधुनिक विकास की मशीनरी को एक हिंसक और संहारक शक्ति के रूप में चित्रित किया गया है:

मशीनों का आतंक: अर्थ मूवर्स, बुलडोजर, रोड रोलर और डायनामाइट जैसे आधुनिक उपकरण वनों, पर्वतों और नदियों का सीना चीर रहे हैं।

प्राकृतिक संपदा का बाजारीकरण: जो जंगल कभी प्राकृतिक संपदा और साझा जीवन का आधार था, उसे पहले राज्य की

Edit with WPS Office

'राष्ट्रीय संपत्ति' बनाया गया और फिर बहुराष्ट्रीय कंपनियों (MNCs) को दीर्घकालिक पट्टों पर बेच दिया गया।

पारिस्थितिकी का खोखलापन: खनिजों और संसाधनों के लालच में पृथ्वी को भीतर से खोखला कर दिया गया है। यह दावानल (प्राकृतिक आग) नहीं, बल्कि मानव-निर्मित विनाशकारी आपदा है।

4. आदिम समुदाय का विस्थापन और त्रासदी

जंगल का विनाश केवल पेड़ों का कटना भर नहीं है, यह उस पर आश्रित समूची जैव-विविधता और आदिवासियों का संहार है।

लेखक ने अंडमानी स्त्री का रूपक प्रस्तुत किया है, जिसे जबरन पोर्ट ब्लेयर में बसाया गया है और वह अपनी जड़ों व जंगल की ओर लौटने के लिए छटपटाती है।

जब जंगल में विनाश की लपटें पहुँचती हैं, तो सदियों से सह-अस्तित्व में रह रहे आदिवासी कबीले अपने ही पुश्तैनी आवास से बेदखल हो जाते हैं।

आग और बारूद की आंधी में वन्यजीव और आदिवासी भस्म हो जाते हैं। उनके न रहने पर भी वायुमंडल में उनकी सामूहिक चेतना गूँजती रहती है। उनके लिए जंगल कोई 'संसाधन' या 'ज़मीन का टुकड़ा' नहीं, बल्कि उनका समूचा परिवार, ब्रह्मांड और अस्तित्व था।

5. मनुष्य की बर्बरता बनाम जंगल की सहजता

जंगल मनुष्य से सीधा संवाद करते हुए उसकी सभ्यता के इतिहास पर गंभीर प्रश्नचिह्न लगाता है। जंगल कहता है कि उसने कभी मानव बस्तियों की ओर लालच से नहीं देखा, कभी किसी पर आक्रमण नहीं किया। इसके विपरीत मानव इतिहास युद्ध, आधिपत्य, लूट, दासता और क्रूरताओं से भरा रहा है। प्रकृति का स्वभाव सहजीवन और सहजता है, जबकि आधुनिक मनुष्य का स्वभाव शोषण और प्रभुत्व स्थापित करना है।

6. मार्मिक अंत: रक्त-रंजित 'विकास'

कहानी का चरमोत्कर्ष अत्यंत प्रतीकात्मक और झकझोरने वाला है। जब सारा जंगल जलकर राख हो जाता है, तो चारों ओर केवल काले ठूंठ बचते हैं। सबसे ऊंचे ठूंठ पर एक सफेद ध्वज लहराता है, जिस पर लाल रंग के मोटे अक्षरों में ‘विकास’ लिखा होता है।

उस ध्वज के चारों ओर गिद्धों का पहरा है, जो पूंजीवादी गिद्ध-दृष्टि और विनाशकारी तंत्र के द्योतक हैं।

‘विकास’ शब्द के अक्षरों के निचले सिरों से लहू की बूँदें टपक रही हैं, जो धरती की तपन से भाप बनकर आकाश पर छा जाती हैं।

यह दृश्य स्पष्ट संकेत देता है कि वर्तमान पूँजीवादी विकास प्रकृति, वन्यजीवों और आदिवासियों के रक्त और विनाश की नींव पर खड़ा हुआ एक छल है। कहानी पारिस्थितिक संतुलन और प्रकृति के अधिकारों की सशक्त पैरवी करती है।

प्रश्न :

"‘जंगल पर विकास’ कहानी आधुनिक पूँजीवादी विकास और अंधाधुंध औद्योगिकीकरण के क्रूर चेहरे को बेनकाब करती है।"—इस कथन के आलोक में कहानी में चित्रित प्राकृतिक दोहन तथा आदिम जीवन (आदिवासियों) के विस्थापन व विनाश का सविस्तार वर्णन कीजिए।

कहानी में जंगल द्वारा मनुष्य पर लगाए गए आक्षेपों की विवेचना कीजिए तथा अंत में ठूंठ पर फहराते 'रक्त-रंजित विकास' के ध्वज के प्रतीकात्मक अर्थ को स्पष्ट कीजिए।


Edit with WPS Office

6. नदी गायब है : एस.आर. हरनोट

लेखक परिचय :

एस.आर. हरनोट का जन्म हिमाचल प्रदेश के शिमला जिले के चनागाव गाँव में 22 जनवरी, 1955 में हुआ। इनकी शिक्षा एम.ए. हिन्दी तक हुई। आजतक उनकी 23 पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। जिनमें अलग-अलग विधाएँ हैं। उनकी चार कहानी पर लघु फिल्में बनी हैं। उनकी कई कहानियों का अंग्रेज़ी, मराठी, गुजराती तथा रूसी भाषाओं में अनुवादित हुई है। वे हिमाचल प्रदेश पर्यटन विकास निगम की सरकारी सेवा में कार्यरत थे। उन्हें आज तक कई पुरस्कारों से सम्मानित किया गया है। प्रस्तुत कहानी 'नदी गायब है' इस कहानी संग्रह से ली गयी हैं।

कथा-सार

प्रस्तुत कहानी पर्यावरण संरक्षण और अमानवीय स्वार्थ के बीच के संघर्ष को अंकित करती है।

यह कहानी एक पहाड़ी नदी के ग़ायब होने की पृष्ठभूमि में लिखी गयी है, जिस नदी प्रवाह को बिजली परियोजना के लिए सुरंग द्वारा बदल दिया गया है। नदी ग़ायब होने से स्थानीय लोगों को कठिनाइयों और पर्यावरणीय विनाश का सामना करना पड़ता है। विकास के नाम पर राजनीतिज्ञ जैसे प्रधान, विधायक तथा मुख्यमन्त्री सभी बहुराष्ट्रीय कम्पनियों पर मेहरबान थे। कहानीकार के शब्दों में "जिस कम्पनी को यह काम मिला था, वह बहुत बड़ी कम्पनी थी जिसने अरबों रुपये इस योजना के लिए लगा दिये थे। उन्हें इससे कोई मतलब न था कि उनके काम से नदी ग़ायब हो रही है या जंगल नष्ट हो रहा है या गाँव की ज़मीन धँस रही है या ग़रीबों की रोज़ी-रोटी छीनी जा रही है। उनके लिए तो पहाड़ सोना थे और प्रदेश की सरकार विकास के नाम पर उस कम्पनी पर बहुत मेहरबान भी थी।" प्रशासनिक उत्पीड़न भयावह है। इसमें अपने जड़ों से कटने का भयावह दर्द है। विकास के नाम पर विनाश की त्रासदी है।

बिजली बनाने के नाम पर निजी कम्पनियों ने नदी को ही ग़ायब कर दिया है। यह मात्र नदी के साथ छेड़खानी नहीं है, बल्कि हज़ारों सालों की संस्कृति से कट जाना है। क्योंकि संसार की सभी सांस्कृतिक नदी के किनारे निर्माण हुई है। कहानीकार के शब्दों में, 'इस छोटी-सी नदी से कई गाँवों की रोज़ी-रोटी चलती थी। इसी के किनारे किसानों के क्यार थे, जिसमें वे धान, गेहूँ बीते और सब्ज़ियाँ उगाते। अभी भी पहाड़ों के इन गाँवों में कोई पानी की योजना नहीं थी, इसलिए लोगों ने ज़रूरत से पानी ले लिया था।' अन्त में ग्रामजनों ने अपने आक्रोश से शासन की दमनकारी शक्तियों को तहस-नहस कर दिया।

कहानी की व्याख्या :

एस.आर. हरनोट द्वारा रचित कहानी 'नदी गायब है' आधुनिक तथाकथित विकास के नाम पर प्रकृति के अंधाधुंध दोहन, पूंजीपतियों और राजनेताओं के गठजोड़, तथा अपनी जल-जंगल-जमीन बचाने के लिए संघर्षरत ग्रामीणों की व्यथा को उजागर करने वाली एक सशक्त कथा है।

1. नदी का अचानक गायब होना और ग्रामीणों में खलबली

कहानी की शुरुआत एक बेहद नाटकीय और चिंताजनक दृश्य से होती है। एक सुबह टीकम हाँफता हुआ अपने घर की ओर भागता है और जोर-जोर से चिल्लाकर अपने पिता, दादा, ताऊ और पूरे गाँव को पुकारता है कि नदी गायब हो गई है। टीकम रोज की तरह नदी किनारे बने घराट (पनचक्की) में गेहूँ पीसने गया था। उसने देखा कि घराट चलाने वाली 'कूहल' (नाली) सूखी पड़ी है। जब वह नदी की ओर गया, तो उसने पाया कि जहाँ सदियों से सदानीरा नदी बहती थी, वहाँ अब सिर्फ सूखा पत्थर और रेत बचा था। शुरुआत में ग्रामीणों को लगा कि टीकम को कोई भ्रम हुआ होगा, लेकिन जब मंदिर का पुजारी और अन्य लोग मौके पर पहुँचे, तो नदी सचमुच पूरी तरह सूखी और गायब मिली।

2. नदी और पहाड़ी जीवन का अटूट रिश्ता

Edit with WPS Office

यह नदी केवल पानी का बहाव नहीं थी, बल्कि दर्जनों गाँवों की जीवनरेखा (लाइफलाइन) थी। बर्फ से ढके पुराने ग्लेशियरों से निकलने वाली इस नदी के पानी से किसानों के क्यार (खेत) सिंचित होते थे, जिनमें धान, गेहूँ और मौसमी सब्ज़ियाँ उगाई जाती थीं। सरकार की ओर से यहाँ पानी की कोई अन्य योजना नहीं थी। नदी के गायब होने का सीधा अर्थ था—खेती का नष्ट होना, घराटों का बंद होना, पशुओं का प्यासा मरना और ग्रामीणों की रोज़ी-रोटी का पूरी तरह छिन जाना।

3. विकास के नाम पर विनाश का सच

जब ग्रामीण नदी के प्रवाह की खोज में ऊपर पहाड़ की ओर बढ़ते हैं, तो उन्हें रास्ते में गाँव का प्रधान कुछ बाहरी लोगों के साथ मिलता है। जब पुजारी और ग्रामीण नदी के सूखने पर देवता के नाराज होने की आशंका जताते हैं, तो प्रधान हँसते हुए इसका असली कारण बताता है। वह बताता है कि नदी कहीं खोई नहीं है, बल्कि दूसरे जिले की सीमा पर मुख्यमंत्री द्वारा शुरू की गई बिजली परियोजना (हाइड्रो-प्रोजेक्ट) के लिए नदी को एक विशाल सुरंग में मोड़ दिया गया है।

प्रधान इसे विकास बताते हुए कहता है कि इससे घरों में बिजली आएगी और कंपनी लोगों को नौकरियाँ देगी। जब टीकम और पुजारी खेतों और घराटों की बात करते हैं, तो प्रधान संवेदनहीनता से उन्हें बिजली से चलने वाली चक्कियों के लिए सरकारी लोन लेने की सलाह देता है।

4. पर्यावरण संकट और प्रशासन की संवेदनहीनता

परियोजना के कारण प्रतिदिन भारी डायनामाइट विस्फोट किए जा रहे थे। इन धमाकों से पहाड़ दरक रहे थे, टनों चट्टानें नदी तल में गिर रही थीं, और गाँव की जमीन धँसने लगी थी। सबसे बड़ा खतरा यह था कि धमाकों के कंपन से ऊपर सदियों से जमा ग्लेशियर पिघलकर या टूटकर कभी भी पूरे गाँव को अपनी आगोश में ले सकते थे।

टीकम गाँव वालों को संगठित करता है और एक समिति बनाकर हस्ताक्षरयुक्त आवेदन पत्र तैयार करता है। वे अपनी गुहार लेकर स्थानीय विधायक और फिर मुख्यमंत्री तक जाते हैं, लेकिन दोनों ही जगहों पर उन्हें केवल 'विकास' के लंबे-चौड़े भाषण सुनने को मिलते हैं और कोई राहत नहीं मिलती। सत्ता और बहुराष्ट्रीय कंपनी के इस गठजोड़ के सामने जनता पूरी तरह असहाय नजर आती है।

5. देवता की शरण और अंधविश्वास का टूटना

राजनीतिक और प्रशासनिक रूप से निराश होकर ग्रामीण अपनी पारंपरिक देव-आस्था का सहारा लेते हैं। उनके क्षेत्र के कुलदेवता की बहुत मान्यता थी। देव-पंचायत में देवता भी नाराज़ होते हैं और विधायक तथा मुख्यमंत्री को हाजिर होने का फरमान भेजा जाता है, लेकिन शासन ने इसे 'विपक्षी राजनीति' कहकर ठुकरा दिया।

अंततः ग्रामीण तय करते हैं कि वे स्वयं कंपनी का काम रोकेंगे। जब उन्हें पता चला कि भारी पुलिस बल ग्रामीणों को हटाने आ रहा है, तो वे अपने साथ देवता के भव्य रथ और वाद्य-यंत्रों को लेकर विरोध स्थल पर धरने पर बैठ जाते हैं। उन्हें विश्वास था कि देवता की उपस्थिति में कोई उन पर हाथ नहीं उठाएगा।

6. दमनकारी हिंसा और त्रासदी

कंपनी के अरबों रुपये के नुकसान को रोकने के लिए प्रशासन निर्मम हो जाता है। पुलिस ने लाउडस्पीकर पर चेतावनी देकर लाठीचार्ज शुरू कर दिया। जब ग्रामीणों पर लाठियों का असर नहीं हुआ, तो पुलिस ने सीधी गोलियाँ चला दीं।

पहली गोली देवता के बुजुर्ग कारदार को लगी, दूसरी गोली पुजारी को लगी। दो युवा मौके पर ही मारे गए और एक युवती अंतिम साँसें गिनने लगी। जिस देवता को ग्रामीण अपनी ढाल मानकर लाए थे, वह गोलियों और लाठियों को नहीं रोक पाया। गोलीबारी के समय देवता के रथ को अकेला छोड़कर भागते कारदारों को देखकर ग्रामीणों का सदियों पुराना अंधविश्वास और भ्रम टूट गया। निराशा और गुस्से में एक युवक देवता के रथ को जलाने के लिए मिट्टी का तेल तक ले आया, लेकिन टीकम ने

Edit with WPS Office

उसे समझाकर रोका।

7. सामूहिक आक्रोश और वास्तविक 'देव-शक्ति' का प्रकटीकरण

गोलियों से ग्रामीणों को खदेड़कर पुलिस और कंपनी के अधिकारी जश्न मनाने लगे। उन्होंने रात भर शराब और गोश्त की दावत उड़ाई और मदहोश हो गए। लेकिन इसी बीच ग्रामीणों के भीतर का डर समाप्त हो चुका था।

आधी रात को ग्रामीणों ने एकजुट होकर दमनकारियों पर धावा बोल दिया। सुबह वहाँ सिर्फ फटी हुई पुलिस की वर्दियाँ, टूटी बंदूकें, लाठियाँ और शराब की बोतलें बिखरी पड़ी थीं। कहानी का समापन इस गहरे विचारोत्तेजक संदेश के साथ होता है कि मंदिर की लकड़ी और धातु की मूर्तियों में कोई शक्ति नहीं थी; वास्तविक 'देवता' तो ग्रामीणों की वह सामूहिक चेतना और आक्रोश था, जिसने संगठित होकर शासन की दमनकारी और क्रूर शक्तियों को तहस-नहस कर दिया।

निष्कर्ष:

यह कहानी वर्तमान विकास मॉडल की विभीषिका पर गहरा प्रहार करती है। यह दर्शाती है कि जब तक आम जनता अंधविश्वास और व्यवस्था के खोखले वादों के भरोसे रहती है, तब तक उसका शोषण होता है; किंतु जब वह एकजुट होकर अपने अधिकारों और प्रकृति के लिए संघर्ष करती है, तो वही उसकी सबसे बड़ी सामूहिक शक्ति बन जाती है।

प्रश्न :

'नदी गायब है' कहानी के आधार पर स्पष्ट कीजिए कि विकास के नाम पर बनाई जाने वाली बड़ी जल-विद्युत परियोजनाएँ किस प्रकार स्थानीय पर्यावरण, संस्कृति और ग्रामीणों की आजीविका को संकट में डाल देती हैं? इस संदर्भ में राजनीतिक-प्रशासनिक संवेदनहीनता पर प्रकाश डालिए।

कहानी में पुलिस की गोलीबारी के बाद ग्रामीणों का देव-आस्था और अंधविश्वास से किस प्रकार मोहभंग हुआ? अंत में उन्होंने शासन की दमनकारी शक्तियों का सामना कैसे किया और लेखक ने वास्तविक 'देवता' किसे माना है? सविस्तार उत्तर दीजिए।

Edit with WPS Office